राख की दीवार का पड़ोसी

फूलचंद

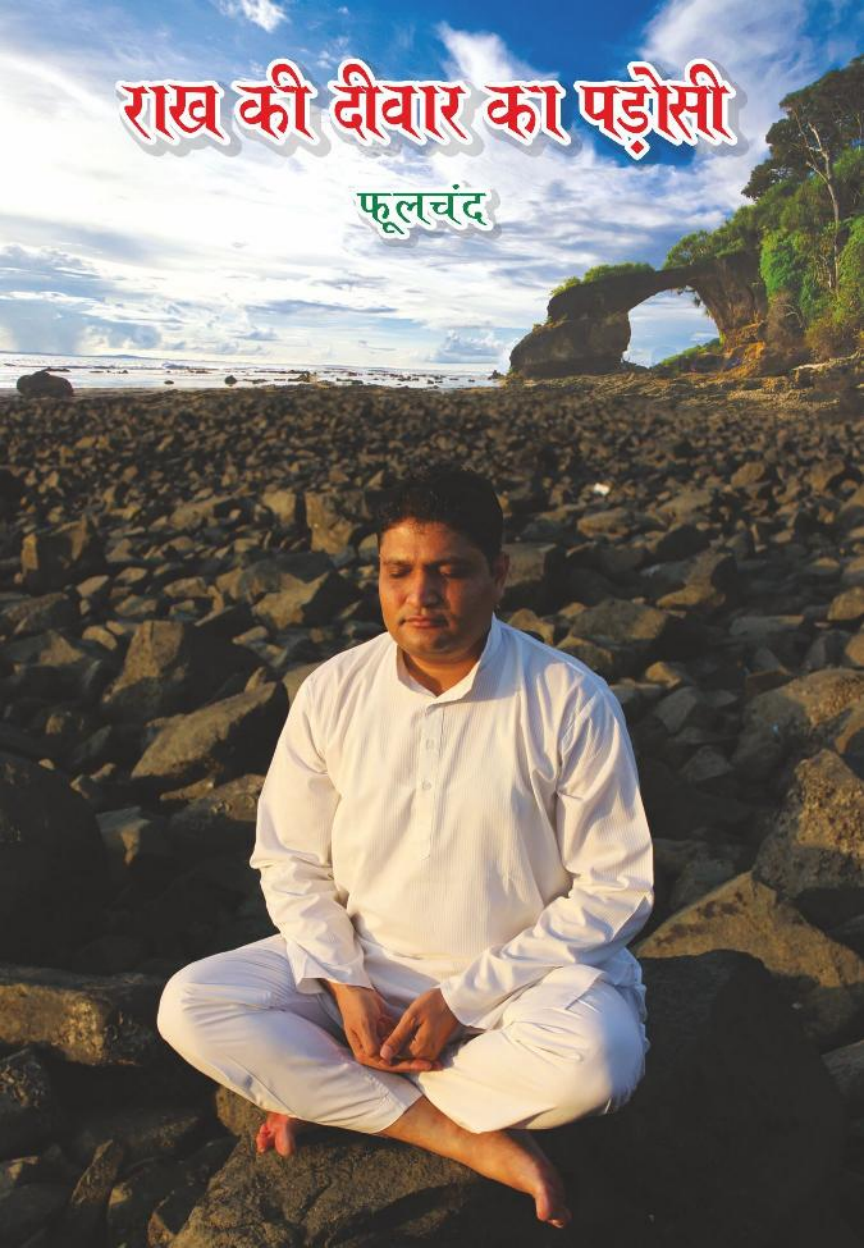

करुणा सागर पूज्य गुरुदेव श्री फूलचंद जी शास्त्री ने संपूर्ण पृथ्वी पर किसी भी प्रकार के भेदभाव बिना हज़ारों घंटों के प्रवचनों एवं अनेक गद्य एवं पद्य रचनाओं के माध्यम से समस्त जीवों को निज शुद्धात्मा का परिचय दिया है। आप स्वयं को देहरूपी राख की दीवार का पड़ोसी मानते हैं और मोक्षमार्ग का मुसाफिर जानते हैं। आपके ऑडियो–विडियो प्रवचन एवं साहित्य www.fulchandshastri.com एवं ASK UMARALA YouTube Channel पर निःशुल्क डाउनलॉड किये जा सकते हैं। आपके प्रवचन विविध टेलिविजन चैनलों पर प्रतिदिन प्रसारित होते हैं।

प्रत्येक आत्मा में आत्मानुभूति एवं अतीन्द्रिय आनंद प्रकट करने का सामर्थ्य है। गुरुदेव भावना भाते हैं कि उनके इस पृथ्वी से अलविदा होने से पहले १४२ ज्ञान दीपक प्रज्वलित हों, फिर १४२ ज्ञान दीपकों की परम्परा से ४१५ ज्ञान दीपक, ४१५ ज्ञान दीपकों की परम्परा से १ लाख ज्ञान दीपक और १ लाख ज्ञान दीपकों की परम्परा से अनंत ज्ञान दीपक प्रज्वलित हों। जो आत्मखोजी मिथ्यात्व एवं अज्ञानरूपी अंधकार से मुक्त होना चाहते हों, वे पूज्य गुरुदेव की प्रज्वलित ज्ञानज्योति के सानिध्य में रहकर अपनी भी ज्ञानज्योति प्रज्वलित कर सकते हैं। जीवन के इस अपूर्व एवं अमूल्य अवसर का लाभ लेकर ज्ञान दीपक ! प्रज्वलन आत्म साधना का शुभारंभ करने हेतु आध्यात्मिक साधना केन्द्र, उमराला में हार्दिक स्वागत है।

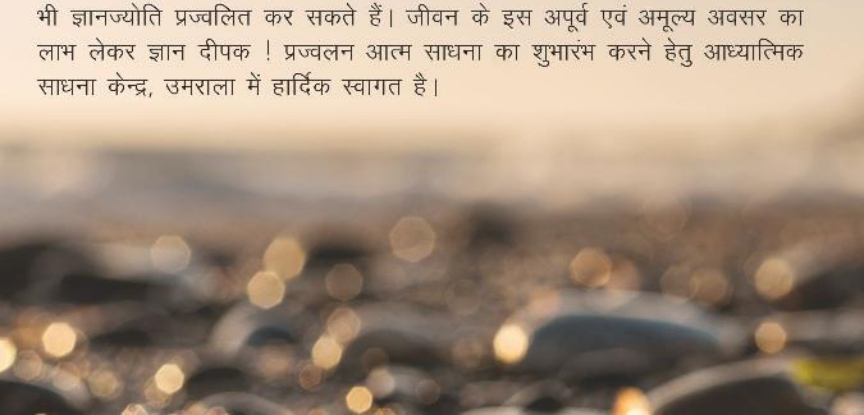

राख की दीवार का पड़ोसी

रचयिता
फूलचंद

प्रकाशक
आध्यात्मिक साधना केन्द्र - उमराला

प्रथम आवृत्ति : 25 जुलाई 2020

प्रत : 1000

प्रकाशक :
आध्यात्मिक साधना केन्द्र - प्रधान केन्द्र
पूज्य गुरुदेव श्री कानजीस्वामी प्रवचन हॉल,
चोगठ रोड़, उमराला - 364330
जि. भावनगर (गुजरात)
Website : www.fulchandshastri.com
E-mail : ask@fulchandshastri.com
YouTube : ASK UMARALA
: +91 9624446142
: Gyaan Deepak Prajwalan Atma Sadhana

प्राप्ति स्थान :
आध्यात्मिक साधना केन्द्र - प्रधान केन्द्र
पूज्य गुरुदेव श्री कानजीस्वामी प्रवचन हॉल,
चोगठ रोड़, उमराला - 364330
जि. भावनगर (गुजरात)
किशोरभाई जैन : +91 2843235202/03
धर्मेन्द्रभाई जैन : +91 9898245201

टाईप सेटिंग एवं मुद्रक : प्रिन्ट-ओ-फास्ट
ब्रह्मपुरी, लुधियाना (पंजाब) – 141008.
फोन : +91-9872130555, 161-4061555
E-mail : printofastludhiana@gmail.com

चैतन्य स्वभावी निज शुद्धात्मा को
श्रद्धान में टंकोत्कीर्ण करके
परिणति की निर्मलता को उपलब्ध
समस्त सम्यग्दृष्टी ज्ञानी धर्मात्माओं को

सविनय समर्पित

प्रस्तावना

चैतन्य परमात्मा की पुकार करने वाले पूज्य गुरुदेव श्री फूलचंद जी की करुणा हम ज्ञान दीपकों पर प्रतिसमय सतत बरस रही है। हे गुरुदेव ! आप में हमें गुरु के भी दर्शन हुए हैं और देव के भी दर्शन हुए हैं।

दिनांक १९ अप्रैल २०२० के दिन शाम ७.४२ पर परम श्रद्धेय गुरुदेव श्री को कुछ ही पलों में ज्ञान में जानने में आये संस्मरणों के फल स्वरूप दिनांक २५ अप्रैल २०२० के दिन शाम चार बजे ''राख की दीवार का पड़ोसी'' नामक इस मौलिक रचना का सफल समापन हुआ। हिन्दी भाषा में रचित यह एक पद्यात्मक अलौकिक रचना है, जिस पर आप ही ने गद्यात्मक शैली में संक्षिप्त टीका लिखी है। चौपाई छंद में रचित इस रचना में १४२ काव्य हैं। आप ही के शब्दों में – ''वैसे तो मैंने हज़ारों घंटे के प्रवचन किये हैं, परन्तु उन सब में भेदविज्ञान के लिये यह सर्वश्रेष्ठ रचना है।''

आप ज्ञानी भगवान की करुणा हम जैसे पामर जीवों पर बरसी है, जिसके फल स्वरूप इस ''राख की दीवार का पड़ोसी'' कृति का उद्‌भव हुआ है। आपश्री ने ज्ञानी–अज्ञानी की दशा और दिशा को सशक्त, सरल उदाहरणों के माध्यम से समझाकर इन चौपाइयों में ज्ञान दीपकों के लिये पुनः पुनः विचारणीय ऐसे मीठे–मधुर दिशा निर्देशक बोध ही दे दिये हैं।

आप चैतन्य सागर में डुबकी लगाकर ''राख की दीवार का पड़ोसी'' कृति के रूप में एक और अनमोल मोती हमें परोस रहे हैं। इस रचना में आत्मा और देह के बीच दिन–रात भेदज्ञान करने की चाबी आप दे रहे हैं, जिससे हम आत्मानुभूति को उपलब्ध हो सकें।

इस अनुपम कृति में शरीर को राख की दीवार बताया गया है और यह भी बताया गया है कि आत्मा स्वयं चैतन्य महल है। इस चैतन्य महल के पड़ोस में राख की दीवार का निर्माण होता है, किन्तु आत्मा चैतन्य स्वरूप रहकर अत्यंत दूर से राख की दीवार को जानता और देखता है।

इस रचना में मकान की दीवार और राख की दीवार में अनेक समानतायें बताई गई हैं। वर–वधू की जब शादी होती है, तो बड़े–बूढ़े घर की दीवारों को तथा वर–वधू राख की दीवारों को देखते हैं। जैसे कारीगर मकान को बनाता है, ऐसे ही माता–पिता रूपी कारीगर राख की दीवार का निर्माण करते हैं। मकान की छत को लकड़ी के सहारे की ज़रूरत पड़ती है, ऐसे ही राख की दीवार को माँ के आश्रय की ज़रूरत पड़ती है। जैसे नौ माह तक बच्चा माँ के गर्भ में रहे, तो बच्चे का जन्म होता ही है, उसी तरह अधिक से अधिक छह माह तक आत्मचिंतन चले, तो सम्यग्दर्शन का जन्म होता ही है।

परम कृपालु श्री सद्गुरुदेव द्वारा रचित अत्यंत करुणापूर्ण वात्सल्य से पूरित यह रचना हम सभी को चिन्तन एवं भेद विज्ञान में अत्यंत उपयोगी होगी। इस रचना में एक क्षेत्रावगाही राख की दीवार और भिन्न क्षेत्रावगाही घर की दीवारें, परिवारजन आदि के पुद्गल स्कंधों के बीच तुलनात्मक विवेचन करते हुए निज चैतन्य स्वरूप के सम्यक् अनुमान की विधि स्पष्ट क्रमबद्ध रीति से समझाई है। विचार पूर्वक गहराई से अध्ययन करने पर हम पाते हैं कि प्रथम गुणस्थान से गुणस्थानातीत दशा तक का संपूर्ण विवेचन इस अद्भुत शास्त्र में निबद्ध है।

अंत में हम सभी ज्ञान दीपक यह भावना भाते हैं कि जो रहस्य आपके ज्ञान में आये हैं, वे रहस्य वाणी के द्वारा व्यक्त हों अर्थात् एक–एक चौपाई पर आपके सत्संग का लाभ हम सभी पामर जीवों को प्राप्त हो, ऐसी हम मंगल भावना भाते हैं। हम आपके अमृत वचनों को हृदय में रखकर, आपके समझाये हुए मार्ग पर चलकर, आप तक पहुँचें ऐसी उत्तम भावना भाते हैं। हे गुरुदेव ! हम ज्ञान दीपक आपकी सच्ची भक्ति के काबिल हो सकें। बस, अब तो चैतन्य, चैतन्य, चैतन्य की मस्ती में प्रतिसमय मस्त रहें।

स्वस्तिमुखी, अध्यात्मवेत्ता, श्रुतसागर, गुणग्राही
ज्ञान दीपक परिवार

राख की दीवार का पड़ोसी (स्तुति)

असु किरणों से दूर हो, मिथ्यात्व अंधियार ।
चंद भवों में भवसिंधु, भविजन पावें पार ॥१॥
पड़ोसी इस शरीर को, मान राख दीवार ।
चैतन्य महल आत्मा, सारे जग में सार ॥२॥
हम सब परदेसी लहे, स्वदेसी की पुकार ।
चैतन्य में कर विहार, विमुक्त हो गति चार ॥३॥
भेद विज्ञान की कला, कहते तारणहार ।
परम ज्ञान दीपक जले, अहो ! अहो ! उपकार ॥४॥

चैतन्य परमात्मा असु अर्थात् सूर्य है। असु की चमकती किरणों से भव्य जीवों का अनादिकालीन मिथ्यात्व अंधकार दूर हों। मिथ्यादर्शन–ज्ञान–चारित्र की बेड़ियों से बंधे जीव महसूस करते हैं कि वे अंधकार से भरपूर कारागृह में कैद हैं। वे भव्य जीव चंद भवों में ही भवसागर से छूटकर सदा के लिये चैतन्य सागर में आनंद भवन की यात्रा करें ।।१।।

शरीर रूपी पड़ोसी को राख की दीवार सम जानकर स्व–पर प्रकाशक चैतन्य महल सम आत्मा में ही वास हों। चैतन्य महल ही सारे जगत का सार है, ऐसी चैतन्य तत्त्व की जागृति बनी रहें। मन, वचन, काया के सतत पलटते विचार, वाणी, वर्तन में और कभी नहीं पलटते चैतन्य तत्त्व के बीच भेदज्ञान की कला कायम रहें ।। २।।

आत्मज्ञान बिना भटकते सभी जीव परदेसी हैं, सभी आत्मज्ञानी स्वदेसी हैं, अतः हम स्वरूप स्थित होने हेतु स्वदेसी की पुकार सुनते हैं। आज तक परदेस में ही घूमे हैं, अब ज्ञान प्रकाश से चैतन्य में विहार करके स्वदेसी होकर, अनंत सुख की प्राप्ति कर, चारों गतियों से पार होकर सिद्ध भगवान होने की भावना हमारे हृदय में खिल रही है ।। ३।।

तारणहार सद्गुरु भेदविज्ञान की कला सिखाकर मुक्ति का मार्ग बताते हैं। उनकी करुणा की किरणों की उष्णता से मेरी ध्यान ऊर्जा सहज विकसित हों। ज्ञान दीपक प्रज्वलन से प्रत्येक पामर परमात्मा परम ज्ञान दीपक हों और चंद लाला का अहो ! अहो ! उपकार मानते हुए राख की दीवार से अलिप्त चैतन्य महल, आनंद भवन में वास करें ।।४।।

राख की दीवार का पड़ोसी (चौपाई)

महान गुरु राज की चरण रज ।
शीर्ष पर धरकर स्वरूप समझ ॥
चैतन्य महल राख पड़ोसी ।
परम ज्ञान दीपक निर्दोषी ॥१॥

महान गुरु राज के चरणों की धूल को मस्तक पर धारण कर एवं चैतन्य स्वरूप समझकर ऐसी यथार्थ श्रद्धा हों कि मैं त्रिकाल चैतन्य महल हूँ और वर्तमान में राख की दीवार का पड़ोसी हूँ। निश्चय से प्रत्येक आत्मा चैतन्य ज्योति मात्र होने से निर्दोष है, परम ज्ञान दीपक है। व्यवहार से पूर्ण वीतरागी परमात्मा निर्दोष हैं, परम ज्ञान दीपक हैं।

दीवार क्या कि शोर मचाती ।
राख दीवार प्रभु गुण गाती ॥
राख दीवार इलाज नोनी ।
निर्मल आतम सदैव मौनी ॥२॥

मकान की दीवार शोर नहीं मचाती, परन्तु राख की दीवार रूपी काया परमात्मा के गुणगान गाती है और राख की दीवार के पड़ोसी की परिणति स्वरूप की ओर जाती है। राख की दीवार की बीमारी को दूर करने के लिये नोनी नामक औषधि कार्यकारी है। वाणी एवं व्याधि से पार निर्मल भगवान आत्मा त्रिकाल मौन स्वरूप है। मौनी ही मुनि हैं।

बस मैं तो हूँ चैतन्य महल ।
राख की दीवार बगल रहल ॥
अरे ! मोक्ष मारग का राही ।
परम ज्ञान दीपक का चाही ॥३॥

द्रव्यदृष्टि से मैं चैतन्य महल मात्र हूँ , फिर भी वर्तमान में राख की दीवार के पड़ोस में रहता हूँ। पर्यायदृष्टि से मोक्षमार्ग का मुसाफिर हूँ और पूर्ण शुद्ध सिद्धावस्था की प्राप्ति की भावना भाता हूँ। परम शुद्ध निश्चय नय का विषय ही दृष्टि का विषय है और प्रमाण का विषय जो द्रव्य है, वह ज्ञान का विषय है। यही कारण है कि ज्ञानी स्वयं को चैतन्य मात्र मानते हैं और मोक्षमार्ग का मुसाफिर जानते हैं।

दीवार को दीवाल बोले ।
अंग्रेज़ी में द वॉल बोले ॥
राख दीवाल देवल रूपी ।
मैं हूँ ज्ञायक देव अरूपी ॥४॥

भाषा की दृष्टि से दीवार को गुजराती में दीवाल और अंग्रेज़ी में द वॉल बोलते हैं। व्यवहार नय से ऐसा कहा जाता है कि मैं अरूपी ज्ञायक भगवान आत्मा इस राख की दीवार रूपी देवालय में विराजमान हूँ। निश्चय नय से प्रत्येक द्रव्य अपने स्वचतुष्टय को छोड़कर किसी पर द्रव्य में विराजमान हो ही नहीं सकता, अतः देव और देवालय, दोनों ही स्वतंत्र हैं।

शादी से पहले मिलते ही ।
देखे सब दीवारों को ही ॥
बूढ़े घर की दीवारों को ।
वर-वधू राख दीवारों को ॥५॥

जब शादी से पहले वर–वधू एवं परिवारजन मिलते हैं, तब सभी लोगों की नज़र दीवारों पर ही टिकी रहती हैं। वर एवं वधू के माता–पिता आदि परिवारजन घर की दीवारों के वैभव को देखते हैं, जबकि वर एवं वधू राख की दीवार के रूप को देखते हैं। जब मौत की घड़ी में राख की दीवार से तलाक होता है, तब पछताते हैं, अरे ! घर की दीवारों के वैभव के बदले चैतन्य वैभव क्यों नहीं देखा? राख की दीवार के रूप के बदले अरूपी चैतन्य क्यों नहीं देखा? अब पछताये होत क्या, जब चिड़िया चुग गई खेत।

दीवार द्वार स्वागत होवें ।
पुष्प तोरण से घर सजावें ॥
राख की दीवार का मर्दन ।
जयमाला फूलों से गर्दन ॥६॥

जब शादी होती है, तब फूलों के तोरण से घर को सजाते हैं एवं प्रवेशद्वार पर बारात का स्वागत होता है। मीठे–मीठे गीत गाकर बारातियों के गले में फूलों की मालायें डाली जाती हैं, राख की दीवार को सम्मान दिया जाता है। भगवान ने कहा था कि प्रत्येक आत्मा समान है। मगर कुछ लोगों ने समान के स्थान पर मान सुना, सम्मान सुना, अपमान सुना।

रूपी दीवार दो सती हैं ।
जो दीदारी काजवती हैं ॥
घर दीवारें ना चरती हैं ।
राख दीवारें विचरती हैं ॥७॥

मकान की दीवार और राख की दीवार दोनों ही दीवारें रूपी हैं। सत् स्वरूप पुद्गल द्रव्य की पर्यायें होने से दोनों ही दीवारें सती हैं। जैसे लोक में सती के साथ छेड़खानी करने का फल कारागृह विकट है, ऐसे ही पर्याय में छेड़खानी के फल में निगोद निकट है। दोनों दीवारों में क्रियावती गुण होता है। गति एवं स्थिति क्रियावती गुण की ही पर्यायें हैं। मकान की दीवारें गति नहीं करती हैं, जबकि राख की दीवारें गति करती हैं।

दोनों दिश हैं दो कारीगर ।
दीवार मोटी रचते अगर ॥
माता-पिता दोय नारी-नर ।
राख दीवार के कारीगर ॥८॥

जिसप्रकार दो कारीगर दोनों दिशाओं में आमने–सामने खड़े रहकर मोटी दीवार का निर्माण करते हैं, उसीप्रकार माता–पिता दोनों मिलकर राख की दीवार का निर्माण करते हैं, बालक को जन्म देते हैं। जब द्रव्य एवं पर्याय अभेद होते हैं, तब निर्विकल्प अनुभूति होती है, यथार्थ ब्रह्मचर्य से सम्यग्दर्शनरूपी पुत्र का जन्म होता है। लौकिक पुत्र मृत्यु तक साथ रहेगा या नहीं ? माता–पिता को ऐसी चिंता होती है। सम्यग्दर्शनरूपी पुत्र मौत नहीं, बल्कि मोक्ष में भी अनंत काल तक रहेगा।

नयी दीवार जब बनती है ।
परावलम्बी वह रहती है ॥
राख दीवार जब बनती है ।
नौ महीना उदर रहती है ॥९॥

जब नये मकान का निर्माण होता है, तब प्रारम्भ में कुछ दिनों के लिये मकान की छत लकड़ी के सहारे रहती है। ऐसे ही जब राख की दीवार का निर्माण होता है, तब बच्चा प्राथमिक नौ महीने तक माता के उदर में रहता है। जैसे अधिक से अधिक नौ महीने तक माता के गर्भ में रहे, तो फिर जन्म लेता ही है। ऐसे ही अधिक से अधिक छह महीने तक चैतन्य तत्त्व का चिन्तन एवं भेदविज्ञान हो, तो सम्यग्दर्शन का जन्म होता ही होता है। हाँ, अधिक से अधिक छह महीने कहा है, तीव्र पुरूषार्थी को अभी हो सकता है।

दीवार द्वार रिबन कटाई ।
गृह उद्घाटन करते भाई ॥
राख की गर्भनाल कटाई ।
राख ढेर उद्घाटन माई ॥१०॥

जैसे मकान के निर्माण के पश्चात् गृह प्रवेश से पूर्व प्रवेश द्वार पर रिबन काटकर उद्घाटन किया जाता है, ऐसे ही बालक के जन्म के समय माता की गर्भनाल काटी जाती है और बालक माता के घर से मिट्टी के घर में प्रवेश करता है। जगत जिसे जन्मदिन कहता है, उस दिन मेरे चैतन्य महल के पड़ोस में राख की दीवार का उद्घाटन हुआ था, परन्तु उससे मुझे क्या ?

दुनिया को दीवार दिखाये ।
हलवा पूरी मिलकर खाये ॥
राख दीवार जु मुँह दिखाई ।
बाँटते हर्षा मन मिठाई ॥११॥

जब नये मकान का दर्शन–प्रदर्शन करते हैं, तब परिवारजन, रिश्तेदार, मित्र सब मिलकर हलवा–पूरी खाते हैं। ऐसे ही जब बालक की मुँह दिखाई होती है, तब माता–पिता अत्यंत हर्षित मन से प्रियजनों को मिठाइयाँ बाँटते हैं। बस अब तो सदा के लिये राख की दीवार के गिरने पर सिद्धालय में अव्याबाध सुख का ही रसपान करेंगे।

दीवार पर घड़ी लगाकर ।
समय देखते हैं सदा पर ॥
राख दीवारें असु पड़ोसी ।
देखे समयसार निर्दोषी ॥१२॥

जैसे लोक में दीवार पर घड़ी लगाकर बार–बार समय देखते रहते हैं, ऐसे ही सम्यग्दृष्टी धर्मात्मा राख की दीवार के पड़ोसी समयसार के सार का दर्शन करते हैं, पृथ्वी के पड़ोसी चैतन्य सूर्य का दर्शन करते हैं। जैसे रात्रि के समय घड़ी के दोनों काँटे बारह बजे अभेद होते दिखते हैं, तब दिन बदल जाता है। ऐसे ही पर्याय एवं द्रव्य अभेद होने पर दिन नहीं, जीवन बदल जाता है, यथार्थ जीवन का मंगलाचरण होता है।

छोटे कमरे में रहता हो ।
मरे मरे पीड़ा सहता हो ॥
राख दीवार अतिशय छोटी ।
मस्त मोही की भूल मोटी ॥१३॥

जैसे कोई अज्ञानी छोटे कमरे में रहता हो और अभी मरा, अभी मरा ऐसे विकल्पों से पीड़ा सहन करता हो, तब आश्चर्य नहीं होता है। आश्चर्य तो तब होता है जब मिथ्यादृष्टी जीव राख की दीवार रूपी छोटे कमरे में रहकर सुख मानता है। सच ही देह में सुखबुद्धि महा अपराध है, जिसके फल में माफ़ी नहीं बल्कि संसार कारागृह की सजा है।

होय ज्यों पहरा दीवार घर ।
बालक राख की दीवार पर ॥
चैतन्य महल पर त्यों होता ।
ज्ञान दीपक ज्यों नहीं सोता ॥१४॥

जैसे घर की सुरक्षा हेतु घर के बाहर चौकीदार रखते हैं, ऐसे ही बालक की राख की दीवार की सुरक्षा हेतु परिवारजन पहरेदार होते हैं। अहा ! अनादि–अनंत स्वयं सुरक्षित चैतन्य तत्त्व की अनुभूति होने पर अरक्षा भय से मुक्त सदैव जागृत प्रज्वलित ज्ञान दीपक की दृष्टि चैतन्य महल पर ही टिकी रहती है।

फूल और चंद में भेद जानो ।
राख दीवार सु फूल मानो ॥
चैतन्य पूनम चंद लाला ।
चैतन्य महल अबंध वाला ॥१५॥

प्रत्येक मनुष्य फूलचंद है। मनुष्य पर्याय देह और आत्मा का संयोग है। मुर्दे की राख को फूल कहते हैं, अतः चैतन्य से न्यारी राख की दीवार सदैव फूल है। वहीं दूसरी ओर द्रव्यदृष्टि से राख की दीवार से न्यारा चैतन्य महल सदैव सिद्ध समान अबंध एवं पूर्णिमा के चाँद समान सदैव पूर्ण चंद परमात्मा है।

धनराज विला के नाम वतन ।
है विलास राज के नाम तन ॥
तुम राख नाम दीवारों के ।
बस नाम राख दीवारों के ॥१६॥

जैसे किसी व्यक्ति का नाम विलास राज है, परन्तु उसके मकान का नाम धनराज विला है। अनामी अपनी पहिचान नाम से ही मानता है। अरे जगतजनों ! तुम घर की दीवारों के भी नाम रखते हो, परन्तु तुम जिसे अपना नाम मानते हो, वह भी तुम्हारी पड़ोसन राख की दीवार का नाम है, तुम्हारा नहीं। मोही नाम की आस में ही बदनाम होता है, बदनाम होकर और बड़े नाम वाला होता है, मगर वह पाता क्या है ? अब तो जागो !

इक कारीगर से ही निर्मित ।
दीवारें भिन्न आयु सीमित ॥
एक माँ-बाप के सब बच्चे ।
राख के ढेर हैं सब कच्चे ॥१७॥

जैसे एक ही कारीगर से बनी हुई सभी दीवारें भिन्न–भिन्न आकार–प्रकार की होती हैं। सभी दीवारों का अस्तित्व अलग–अलग समय तक रहता है। ऐसे ही एक ही माता–पिता के सभी बच्चों की आयु एवं आकार भिन्न–भिन्न होते हैं। अंततः माता–पिता एवं सभी बच्चे राख के ढेर हैं। राख के ढेर के पड़ोस में घनपिंड चैतन्य परमात्माओं का मेला है।

नज़रों से बचने के काजें ।
नींबू मिरच लगे दरवाजे ॥
राख दीवार राखी बंधन ।
संतानों की रक्षा बंधन ॥१८॥

जैसे लोक में अज्ञानी अपने मकान एवं दुकान को दूसरों की नज़र न लग जाये, अतः रक्षा हेतु दरवाजे पर नींबू और मिर्च लटकाकर रखते हैं। ऐसे ही रक्षा के लिये बहन की राख की दीवार के हाथों से भाई की राख की दीवार के हाथ पर राखी बांधी जाती है और वे रक्षाबंधन का त्यौहार मनाते हैं। आत्मा में से ही उत्पन्न होने वाले ज्ञान और राग एक–दूसरे की रक्षा कैसे कर सकते हैं? क्योंकि राग से ज्ञान नहीं होता और ज्ञान से राग नहीं होता।

दीवाली में जलते दीपक ।
दीपावली हो सर्वव्यापक ॥
दीवाली में भीतर आओ ।
राख दीवार से तर जाओ ॥१९॥

दीपावली के अवसर पर सर्वत्र दीपक जलते हैं। भूतकाल में अनंत बार पौद्‌गलिक दीपक प्रज्वलित किया फिर भी अज्ञान का अँधेरा नहीं मिटा। हे परम ज्ञान दीपक ! अब ज्ञान दीपक प्रज्वलित कर चैतन्य महल की श्रद्धा कर यथार्थ दीपावली मनाओ और राख की दीवार से पार होकर सिद्धपुर के नित्य निवासी हों।

रखा है दीवार पर दीया ।
राख दीवार सह भी दीया ॥
पुद्‌गल दीपा राख जलाये ।
ज्ञान दीपक विभाव जलाये ॥२०॥

जैसे दीवार पर दीया रखा हो, ऐसे ही राख की दीवार के पड़ोस में परम ज्ञान दीपक वास करता है। पौद्‌गलिक जड़ दीपक की ज्योति के स्पर्श से शरीर जलता है, जबकि परम ज्ञान दीपक की चैतन्य ज्योति की स्पर्शना से पर्याय में उत्पन्न समस्त विकारी भाव जलकर विलय को प्राप्त होते हैं।

जानी राख दीवार काया ।
ज्ञान दीपकों को समझाया ॥
राख दीवार पास पड़ोसी ।
मोक्ष महल का वासी होसी ॥२१॥

मैंने इस शरीर को राख की दीवार के रूप में जाना है और ज्ञान दीपकों को यही समझाया है कि मैं त्रिकाल चैतन्य महल हूँ और इस राख की दीवार का पड़ोसी हूँ। इसी समझ के बल पर निकट काल में सादि–अनंत मोक्ष महल का स्थायी निवासी होने वाला हूँ। क्योंकि चैतन्य स्वरूप के अतिरिक्त इस जगत में अन्य कहीं भी सदैव टिकने की सुविधा नहीं है।

इक दीवार रु दो खिड़की हैं ।
साफ़ हवा भीतर लाती हैं ॥
राख दीवार दु नाक वाली ।
साँस जहाँ से भीतर चाली ॥२२॥

जैसे एक दीवार में दो खिड़कियाँ हैं, जहाँ से स्वच्छ हवा भीतर आती है और बाहर जाती है। ऐसे ही मेरी पड़ोसन इस राख की दीवार की नाक के दो छेद रूपी खिड़कियों से साँसे भीतर आती हैं और बाहर जाती हैं। मैं चैतन्य महल की ज्ञान की खिड़की से मेरी पड़ोसन राख की दीवार में जाती और वहाँ से आती हवा को अत्यंत दूर से जानता हूँ।

घर की दीवार को टिकाओ ।
शुरुआत में पानी पिलाओ ॥
राख दीवार स्वस्थ टिकानी ।
बार बार कह पी ले पानी ॥२३॥

जैसे लोक में ऐसी सलाह दी जाती है कि यदि तुम मकान की दीवार को टिकाना चाहते हो, तो शुरुआत में ठीक तरह से पानी पिलाओ। ऐसे ही प्रियजन बार–बार कहते हैं कि राख की दीवार को स्वस्थ टिकाने के लिये बार–बार पानी पीते रहो। मकान की दीवार को तो शुरुआत में ही पानी पिलाते हैं, जबकि राख की दीवार को आजीवन पानी पिलाते हैं, फिर भी अंततः गिर ही जाती है।

साल में इक बार दीवाली ।
घर की दीवारें धो डालीं ॥
राख दीवाल नित दीवाली ।
प्रतिदिन धोते गोरी काली ॥२४॥

साल में एक बार दीपावली के त्यौहार पर घर की सफाई होती है, सभी दीवारों को पानी से धोते हैं। यहाँ तो राख की दीवार को प्रतिदिन दीवाली है, अज्ञानी देहरूपी मलिन पड़ोसन को निर्मल करने में अपना जीवन बर्बाद करता है। अज्ञानी पड़ोसन में मस्त रहता है, जिसके फल में जीवन बिखर जाता है, ज्ञानी चैतन्य जीवन में मस्त रहते हैं, जिसके फल में पड़ोसन बिखर जाती है।

दीवार को तू बाद में सज ।
घिसे तू पहले कांच कागज़ ॥
राख दीवार सजते नहाकर ।
स्नान का ब्रश शरीरे घिसकर ॥२५॥

जैसे तुम कांच कागज़ घिस–घिसकर दीवार के पुराने रंग को निकालते हो और फिर उसी दीवार पर नया रंग पोतकर दीवार को सजाते हो। ऐसे ही स्नान का ब्रश घिस–घिसकर राख की दीवार पर लगी धूल को स्नान करके दूर करते हो और फिर राख की दीवार को सजाते हो। कुछ अज्ञानी उससे विपरीत मानते हैं कि शरीर का मैल साधु का आभूषण है, वास्तव में वीतराग परिणतिरूप सकल चारित्र साधु का आभूषण है।

नाबदानी दीवार बनावे ।
मल निकालके निर्मल पावे ॥
राख दीवार मैली ऐसी ।
रहे सदा जैसी की तैसी ॥२६॥

लोक में नाबदानी अर्थात् शौचालय के गड्ढे की दीवार से मल निकालकर निर्मल पाते हैं, परन्तु राख की दीवार तो ऐसी है कि बहुत बार मल विसर्जित करने के बाद भी अशुचिमय काया जैसी मलिन है, ऐसी ही मलिन रही। राख की दीवार तो निर्मल नहीं हुई, परन्तु राख की दीवार को निर्मल करने के लिये डाला गया पानी स्वयं ही मलिन हो गया।

दीवार में खिड़की लगाकर ।
सजते घर परदे लटकाकर ॥
राख दीवार में क्या शंका ।
दिगम्बर छोड़ि अम्बर ढंका ॥२७॥

जैसे दीवार में खिड़की पर रंग बिरंगे परदे लगाकर घर को सजाते हैं, ऐसे ही राख की दीवार के मल–मूत्र द्वार की खिड़की को ढंकने के नाम पर रंग बिरंगे वस्त्राभूषण पहनकर राख की दीवार को सजाया। प्राकृतिक दिगम्बर रूप छोड़कर अम्बर धारण किया, अब तो निर्मल परिणति सहित दिगम्बर होने की भावना भाता हूँ।

दीवारों पर जाले आते ।
झाड़ू से वे जाले जाते ॥
राख दीवार उगती दाढ़ी ।
ब्रश-रेजर से दाढ़ी काढ़ी ॥२८॥

जैसे मकान की दीवारों पर जाले होते हैं, वे जाले झाड़ू से दूर हो जाते हैं। ऐसे ही राख की दीवार पर बाल–दाढ़ी उगते हैं, वे बाल–दाढ़ी दर्पण में देखकर ब्रश–रेजर से दूर हो जाते हैं। अब तो निर्मल परिणति सहित ज्ञान दर्पण में देखकर केशलोंच हों, यही भावना भाता हूँ। केशलोंच के नाम पर एक–दूसरे के केश खींचने का काम बहुत किया, अब तो स्वयं से ही स्वयं का केशलोंच हों।

नहीं हैं ऐसे मुरख इह जग ।
अटकते देखकर जाला रँग ॥
हैं रागी गली-गली गीले ।
किये केश काले रंगीले ॥२९॥

इस जगत में ऐसे मूर्ख तो नहीं पाये जाते, जो दीवार पर होने वाले जाले के रंग को देखकर जाले के रंग में सुख मानते हों। परन्तु रागादि वर्णादि भावों में अटके मूढ़मति रागी गली–गली में भटक रहे हैं, जो राख की दीवार पर उगे बालों को काले–पीले आदि रंगों से रंगकर सुख मानते हैं। दूसरों के सामने स्वयं को कम उम्र वाला जवान व्यक्त करना तो बहुत चाहा, हे ज्ञान दीपक ! अब तो बस आत्मा की पर्याय में आत्मा का अनादि–अनंत जीवन व्यक्त हों, यही पर्याप्त है।

नली दीवार के परदे की ।
पाजामा डोरी मुर्दे की ॥
परदे में होय टाई बटन ।
राख कपड़े में टाई बटन ॥३०॥

जैसे खिड़की के परदे को लटकाने के लिये नली होती है, ऐसे ही राख की दीवार की खिड़की पर पाजामे को टिकाने के लिये डोरी बांधी जाती है। सम्यग्दृष्टी तो बंधती डोरी को अत्यंत दूर से ऐसे देखते हैं, जैसे पड़ोसन का जनाजा बांधा जा रहा हो। जैसे खिड़की के परदे में टाई बटन होते हैं ऐसे ही राख की दीवार के कोट–कुर्ते में टाई बटन होते हैं।

कारागृह में न आज़ादी ।
कैदी ने दीवार सजा दी ॥
बाहर भी सब ऐसे पाते ।
सजी राख दीवार सजाते ॥३१॥

जैसे अपराधी कैदी को कारागृह से बाहर जाने की स्वतंत्रता नहीं होती है, तो वे कारागृह की दीवार को अनेक उपाय करके सजाते रहते हैं। ऐसे ही कारागृह से बाहर भी मोह के अपराध के फल में कर्मों की हथकड़ी से बंधे अज्ञानी आत्मारूपी कैदी देहरूपी कारागृह को सजाते हैं। कैदी के परिवारजन चौकीदार हैं और मेहमान मुलाकाती हैं।

सब दीवारों पर रँग होते ।
तो भी ऊपर से रँग पोते ॥
राख दीवार का रस होवे ।
मेक-अप करत भव खोवे ॥३२॥

यद्यपि सभी दीवारों पर कोई न कोई रंग होते हैं, फिर भी रंग के ऊपर रंग पोतकर लोग दीवार को अधिक रंगीली बनाना चाहते हैं। ऐसे ही प्रत्येक राख की दीवार रंगीन होने पर भी रंग के रस के कारण अज्ञानी मेक–अप आदि कर भवन को नहीं सजाते बल्कि मानव भव नष्ट करते हैं। अरे ! दर्पण को बहुत देखा, अब ज्ञान दर्पण की ओर देख।

दीवार टिकाने चिर काले ।
ज़मीन नीचे नींव डाले ॥
राख दीवार रखे अछूती ।
पैरों में वह डारे जूती ॥३३॥

जैसे दीवार को लम्बे काल तक टिकाने के लिये ज़मीन में नींव डालते हैं, ऐसे ही राख की दीवार के पैरों को दीर्घ काल तक स्वस्थ टिकाने के लिये पैरों में जूते–चप्पल पहनते हैं। राख की दीवार को ज़मीन से अछूती रखना चाहा, परन्तु राख की दीवार से अछूते त्रिकाल टिककर रहने वाले चैतन्य महल में एकत्व नहीं किया।

ऊँची प्लींथ दीवार फेशन ।
नीचे गिरने का हो टेंशन ॥
धार हील चप्पल चहल-पहल ।
गिरे भूलकर चैतन्य महल ॥३४॥

लोक में कहते हैं कि मकान की प्लींथ जितनी ऊँची होती है, मकान की शोभा उतनी अधिक होती है, फिर भले ही ऊपर से नीचे जाने की पूरी सम्भावना हो। अज्ञानी भी चैतन्य महल को भूलकर, राख की दीवार के पैरों में पैनी हील वाली चप्पल पहनकर यहाँ–वहाँ गिरता है। देह के पतन से दुःख नहीं है, परन्तु आत्मा के पतन से अनंत दुःख है।

दीवार में ज्यों दु खिड़की हो ।
कांच सह वहां फ्रेम लगी हो ॥
राख दीवार में त्यों आँखें ।
कान पर चश्मे देख आँखें ॥३५॥

जिसप्रकार किसी दीवार में ऐसी दो खिड़कियाँ हो, जिनकी फ्रेम में कांच लगा हो। बाहर देखने के लिये वे खिड़कियाँ उपयोगी होती हो। उसीप्रकार राख की दीवार में दो आँख रूपी दो खिड़कियाँ हैं, कान पर चश्मे की फ्रेम रखकर कांच के निमित्त से आँखें बाहर देखती हैं। तुम्हें ऐसी दृष्टि प्रकट हो कि जहाँ भी देखो, वहाँ चैतन्य महल ही दिखें।

दीवार के छेद पर जाली ।
देखे बिन सब खाली-खाली ॥
राख की आँख में हो जाली ।
दिखें नहीं चीज़ रूप वाली ॥३६॥

जैसे दीवार के छेद पर बारीक तार वाली जाली हो, तो बाहर दिखाई नहीं देता और बहिर्दृष्टी को बाहर देखे बिना सब खाली–खाली लगता है। ऐसे ही राख की दीवार की आँख में जाली की बीमारी होने पर रूपी चीज़ें दिखाई नहीं देती। बस तुम्हारी मिथ्यात्व की जाली की बीमारी मिटें, जिससे अरूपी स्वरूप दृष्टि का विषय बने।

दीवार में आला बनाते ।
रेडियो रख वाणी लगाते ॥
कान आला राख दीवारे ।
ईयरफोने प्रवचन सारे ॥३७॥

पहले के ज़माने में दीवार में आला बनाते थे, जिसमें रेडियो रखकर आकाशवाणी के समाचार सुनते थे। अब इस आधुनिक युग में राख की दीवार के कान ही आला हैं, जिनमें ईयरफोन लगाकर आकाश और वाणी आदि द्रव्यों से न्यारे चैतन्य की पुकार सुनी जा सकती है, समयसार ही प्रवचनों का सार और नियम का आधार है।

नाप दीवार लम्बी चौड़ी ।
देख-देखकर आँखें फोड़ी ॥
राख दीवार नापी मोटी ।
पाबंदी से खाता रोटी ॥३८॥

अज्ञानी की दृष्टि सदैव मकान–जायदाद पर रहती है। उसे राख की दीवार से लम्बी जुदाई हेतु यह चौपाई याद नहीं रहती, मगर मकान की लम्बाई और चौड़ाई याद रहती है। वह दीवार की भाँति राख की दीवार का वजन और कमर की चौड़ाई नापकर जिम में व्यायाम करता है और गिन–गिनकर रोटी खाता है और छोटी–सी उम्र में पाया नित्य की अनुभूति के अवसर को लुटा देता है।

दीवार मांहि जर्जर छेदन ।
कमज़ोर होके होय भेदन ॥
राख दीवार मिरच खाये ।
अल्सर छेदन भेदन पाये ॥३९॥

जैसे जर्जरित दीवारों में छेद हो जाते हैं और कमज़ोर दीवारों में दरारें हो जाती हैं। ऐसे ही अधिक मिर्च खाने से या अन्य कारणों से राख की दीवार में अल्सर की बीमारी होती है और राख की दीवार में छेदन–भेदन होता है। राख की दीवार का छेदन–भेदन जिस ज्ञान दर्पण में प्रतिबिंबित होता है, ऐसे निज ज्ञान दर्पण का तो कदापि छेदन–भेदन नहीं होता।

आधुनिक इस ज़माने में ।
वायर फिटिंग दीवारों में ॥
ऐसा ही है सभी घरों में ।
रहे नस राख दीवारों में ॥४०॥

जैसे इस आधुनिक ज़माने में विभिन्न रंग वाले विद्युत वायर की फिटिंग दीवारों के भीतर होती है, जिनमें विद्युत प्रवाह बहता है। ऐसे ही सफेद दांत–हड्डी, काले बाल एवं पीले पित्त वाली राख की दीवार रूपी मनुष्य देह में हरे रंग की नसें होती हैं, जिनमें लाल खून दौड़ता है। पुद्गल के वर्ण गुण की पाँचों ही पर्याय राख की दीवार में पाई जाती हैं।

दीवार मांहि वायर खोटा ।
शॉर्ट सर्किट से देह चोंटा ॥
राख दीवार नहीं ठीक रग ।
बिजली करंट लागे रग-रग ॥४१॥

आमतौर पर दीवार में विद्युत वायर ठीक न हो, तो छूने पर शॉर्ट सर्किट से झटका लग सकता है और शरीर वहीं चिपक सकता है। ऐसे ही राख की दीवार में नसें ठीक न हों, तो दिमाग में बिजली के करंट की भांति झटके लगते हैं और शरीर लटक जाता है। खास तो यह कि स्वरूप की स्पर्शना से ही आत्मानुभूति होती है और स्वच्छंदता छोड़कर आत्मानुभवी के संग में शिष्य को भी आत्मानुभूति होती है।

भूकंप में गिरी दीवारें ।
खुद बचने की खुशी मना रे ॥
गिरि अनंती राख दीवारें ।
चैतन्य महल सुखी सदा रे ॥४२॥

जैसे कोई व्यक्ति भूकंप में गिरे मकान से बाहर निकलकर खुद के बच जाने की खुशी मनाता है, ऐसे ही अनंत मरण से राख की अनंत दीवारें गिरी और बिखरी, लेकिन चैतन्य महल सदैव आनंद स्वभावी ही रहा, ऐसा जानकर ज्ञानी राख की दीवार से दृष्टिमुक्त होकर आनंद भवन का आनंद भोगते हैं।

जब भयानक भूकंप आवे ।
तब दीवारें सब गिर जावे ॥
जानलेवा चक्कर हिलावे ।
राख की दीवार गिर जावे ॥४३॥

जब भयानक भूकंप आता है, तब मकान की सब दीवारें गिर जाती हैं। इसीप्रकार जब जानलेवा चक्कर आते हैं, तब राख की दीवार को हिलाकर नीचे गिराते हैं। वे जानलेवा चक्कर इतने हानिकारक नहीं हैं, जितने चतुर्गति के चक्कर। चैतन्य को जान लेने के अवसर पाकर भी नहीं जाना और पर के प्रेम के फल में पतन ही हुआ।

जब भी दीवारें गिर जातीं ।
ईंटें उसमें ना बच पातीं ॥
राख की दीवार गिर जाती ।
हड्डी-पसली ना बच पाती ॥४४॥

जब भी दीवारें गिर जाती हैं, तब उसमें ईंटें भी टूट जाती हैं। ऐसे ही जब राख की दीवार नीचे गिर जाती है, तब हड्डी–पसली टूट जाती है। राख की दीवार के अंग भले ही टूट जायें, परन्तु ज्ञायक की ज्ञान की बहती धारा किसी भी संयोग एवं वियोग में नहीं टूटती है। इस अखंड ज्ञानधारा में व्याप्त एक चैतन्य सत्ता मात्र भगवान आत्मा यही मैं हूँ।

काठ दीवारें उधइ होती ।
राख दीवारें कीट होती ॥
उधइ भगावे दवा छिड़ककर ।
कीट भगावे औषध पीकर ॥४५॥

जैसे लकड़ी की दीवारों में उधई हो जाती है, ऐसे ही राख की दीवारों में कीड़े हो जाते हैं। जैसे लकड़ी की दीवार पर दवाई छिड़ककर उधई भगाई जाती है, ऐसे ही औषधि पीकर राख की दीवार में जन्मे कीड़ों को भगाया जाता है। लकड़ी में उधई हो सकती है, परन्तु अग्नि को उधई नहीं हो सकती। ऐसे ही चैतन्य ज्योति में कर्मों के उदय की उधई नहीं होती है, कर्मों के कीड़े नहीं होते हैं।

कोई दीवार को बनावे ।
कोई और ठीक करि जावे ॥
राख दीवार का भी ऐसा ।
मात-पिता और वैद जैसा ॥४६॥

जैसे दीवार को बनाने वाले कारीगर कोई होते हैं और मरम्मत करने वाले कारीगर कोई और होते हैं, ऐसे ही राख की दीवार को बनाने वाले कारीगर माता–पिता हैं और उपचार करने वाले कारीगर वैद्य हैं। वास्तव में मोह अपराध का कर्ता जीव स्वयं है, अतः मोह का उपचार भी स्वयं को ही करना है। गुरुदेव निमित्त मात्र हैं।

दीवार की मरम्मत होवे ।
श्रम करे पर दीवार खोवे ॥
राख दीवार भी है ऐसी ।
डाक्टर से बचे नहीं वैसी ॥४७॥

जैसे दीवार की मरम्मत करने का परिश्रम करने पर भी कारीगर से दीवार ठीक नहीं हो पाती। ऐसे ही राख की दीवार के बिखरने का काल पकने पर डाक्टर से भी मरीज़ की राख की दीवार बच नहीं पाती। जब कारीगर अपने ही मकान की दीवार को और डाक्टर अपनी ही राख की दीवार को नहीं बचा पाते, तो दूसरी दीवारों का क्या कहना ? अहो ! चैतन्य महल के वैद्य ही सच्चे वैद्य हैं।

ज्यों एक घर से दूसरे घर ।
खाना पीना होय ट्रान्सफर ॥
राख की दीवार का लोशन ।
मांस अर खून का डोनेशन ॥४८॥

जिसप्रकार एक घर से दूसरे घर पर खाने–पीने के पदार्थों का आदान–प्रदान होता है, उसीप्रकार राख की दीवार के उपचार हेतु खून, माँस, चमड़ी आदि का एक शरीर में से दूसरे शरीर में आदान–प्रदान होता है। वास्तव में रक्तदान आदि दान नहीं है, ज्ञानदान श्रेष्ठ दान है, जिसे अपनाकर खून, माँस, चमड़ी आदि के समूहरूप राख की दीवार से मुक्ति होती है।

चार दीवार इक दरवाजा ।
एक द्वार से बाहर हो जा ॥
राख दीवार नव दरवाजा ।
नौ द्वारों से भी नाहीं जा ॥४९॥

जैसे एक कमरे में चार दीवारें हैं और एक दरवाजा है। ऐसे ही इस राख की दीवार में नौ दरवाजे हैं। कोई व्यक्ति कमरे के एक द्वार से बाहर चला जाता है, तो आश्चर्य नहीं होता है, तब जिस कमरे में नौ द्वार हैं, ऐसी राख की दीवार में से पंछी उड़ जाता है, इसमें आश्चर्य क्या है? चैतन्य महल से न्यारा राख से बना यह जड़ कमरा सदैव मरा देखो।

नूतन निवास पहुँचे जैसे ।
पूछ ही ले पड़ोसी कैसे ॥
राख पड़ोसी काल अनंता ।
कादव संतोषी भगवंता ॥५०॥

जैसे ही कोई व्यक्ति नये निवास स्थान पर पहुँचता है, तो अपने पड़ोसी के बारे में पूछताछ कर लेता है। क्या पता पड़ोसी गंदे हो। अरे कादव संतोषी चैतन्य परमात्मा ! तू कुछ ही समय के लिये पाई गंदी पड़ोसन से छुटकारा पाने के लिये अनेक तरकीबें सोचता है, परन्तु अनादिकालीन मलिन पड़ोसन इस राख की दीवार से छूटने हेतु कभी विचार भी नहीं करता है।

रे घर बदले एक बार जब ।
बहुत ही सरदर्द होता तब ॥
राख दीवार बदल अनंती ।
चैतन्य श्रद्धा होय संती ॥५१॥

जब वर्षों बाद सिर्फ एक बार घर बदलने की नौबत आये, तो बहुत ही सिरदर्द होता है। परन्तु राख की अनंत दीवार रूपी अनंत पड़ोसन बदलकर भी मैं चैतन्य महल हूँ, ऐसी यथार्थ श्रद्धा से मोक्षमार्ग भी न पाया, तब मोक्ष का क्या कहना ? चैतन्य तत्त्व में लीन होने से दर्द नहीं रहता और मोक्ष होने पर सिर भी नहीं रहता।

पराधीन घर का जो वासी ।
पधारो गुरु कहे न दासी ॥
हो जाओ सिद्धपुर निवासी ।
अमित पधारे स्वरूप वासी ॥५२॥

जो पराधीन घर की वासी है और गुरुदेव की दासी है, जिसके उर में निश–दिन भक्ति का सागर उछलता है, फिर भी अपने घर गुरुदेव का स्वागत नहीं कर सकती, उसे भी निराश होने की ज़रूरत नहीं। हे परम ज्ञान दीपक ! तुम चैतन्य महल के आश्रय से मोक्षमहल के निवासी हो जाओ, फिर देखो ! अनंत सिद्ध परमात्मा सिद्धपुर पधारेंगे।

नहाती सखी की सेवा की ।
पकड़कर दीवार कपड़े की ॥
सुधी राख दीवार पड़ोसी ।
धोय कर्ममल सेवा होसी ॥५३॥

जैसे कोई स्त्री डोरी पर साड़ी लटकाकर कपड़े की दीवार बनाकर नहा रही हो, तब हवा के कारण साड़ी उड़ती हो, तो उसकी सहेलियाँ थोड़ी देर के लिये साड़ी पकड़कर सखी की सेवा करती हैं। ऐसे ही स्वयं को राख की दीवार के पड़ोसी चैतन्य महल मानते ज्ञानी को मोक्षमार्ग के सहचारियों द्वारा पैर से सिर तक होने वाली सेवा में शरीर कपड़ा दिखता है। स्वरूप स्थित ज्ञानी देहरूपी वस्त्र के पार कर्मों के मैल को धोते हैं।

राख की बहुत ही थी चाहत ।
रतन जलाकर बहु पछताहत ॥
राख की दीवार का मोही ।
चेतन जो भटके तन मोंही ॥५४॥

जैसे कोई मूर्ख राख को पाने की चाहत में और कुछ न जलाकर रत्न को जला दे और बाद में पछताये। ऐसे ही राख की दीवार का मोही समयसार के अनमोल समय को अर्थात् आत्मा की पर्याय को राख की दीवार में ही भटकाता है, जो पर्याय फिर भविष्य में लौटकर कभी वापिस आ नहीं सकती, स्वरूप के आश्रय से सिर्फ केवलज्ञान में जानने में आ सकती है।

दीवार पर खूँटी लगाते ।
खूँटी पर थैली लटकाते ॥
राख दीवार अंगुल खूँटी ।
मुठी खुली तो थैली छूटी ॥५५॥

जैसे मकान की दीवार पर खूँटी लगाकर उस खूँटी पर थैली आदि लटकाते हैं, ऐसे ही मानव राख की दीवार पर उंगलियाँ खूँटी के समान हैं, जिनके सहारे थैली आदि सामान उठाते हैं। जैसे ही मुट्ठी खुलती है और थैली छूटती है, ऐसे ही दृष्टि खुलती है और मैली राख की दीवार छूटती है।

परत दीवार की गिरने पर ।
दिखने लगे सब ईंट पत्थर ॥
राख दीवार कृश होते लख ।
परम पड़ोस का हाड़ पिंजर ॥५६॥

जैसे दीवार की परत गिरने पर ईंट और पत्थर दिखने लगते हैं, ऐसे ही राख की दीवार पतली एवं पामर हो जाने पर चैतन्य महल निवासी परम कृपालु देव के हाड़ पिंजर दिखने लगते हैं। जगत को शरीर के भीतर जो है, वह बाहर व्यक्त होता दिखता है, परन्तु द्रव्य की अनंत शक्तियाँ पर्याय में व्यक्त हो रही हैं, वे चामचक्षु से नहीं दिखाई देती, उन्हें देखने के लिये तो बस ज्ञानचक्षु ही समर्थ हैं।

जब पेड़-दीवार गिरने वाले ।
लकड़ी के सहारे टिका ले ॥
रे परम कृपालु की पड़ोसन ।
लकड़ी संग लगाती आसन ॥५७॥

जब पेड़ या दीवार के गिरने की तैयारी होती है, तब उन्हें लकड़ी के सहारे टिकाकर रखने का प्रयास किया जाता है। ऐसे ही परम कृपालु देव की कृश पड़ोसन बिखरने से पूर्व लकड़ी के संयोग में आसन लगाकर बैठी थी और परम कृपालु देव राख की दीवार से अत्यंत दूर उदासीन होकर बैठे थे। अहो! अहो! चैतन्य महल में आसीन थे।

आज दीवार है जो जानी ।
हो अल्पकाल में अंजानी ॥
राख की दीवार भी जानी ।
हो एक समय में अंजानी ॥५८॥

जो दीवार आज जानी है, कुछ ही काल में वही दीवार अनजानी हो जाती है। ऐसे ही राख की दीवार वर्तमान में जानी है, परन्तु एक समय में ही मृत्यु होने पर अनजानी हो जाती है। हे ज्ञान दीपक ! मृत्यु होने पर राख की दीवार अनजानी हो, उससे पूर्व ही मिथ्यात्व की मृत्यु हों और चैतन्य महल के आश्रय से राख की दीवार अनजानी हों, भावना है कि अब तो बस जानने में आये तो केवलज्ञान में ही जानने में आये ।

दिन अर वार बीच क्या लाना ।
पक ही गया काल चल जाना ॥
दीवार रु राख दीवार ढब ।
शेष बचे अवशेष अर शब ॥५९॥

जब फल पक जाता है, तब गिर जाता है। उस फल को दिन और वार से क्या मतलब ? ऐसे ही जब काल ही पक गया हो, तब आत्मा राख की दीवार से विदा हो जाता है। दीवार और राख की दीवार गिरते ही बस अवशेष और शव बचते हैं। भावना भाता हूँ कि वैराग्य ऐसा पके और परिवार के पेड़ से मुक्ति हों, फिर गुरु का आकर्षण भी न रहे और ऊर्ध्वगमन हों।

घर की दीवारें गिर जातीं ।
मुझ से नहीं पूछने आतीं ॥
राख दीवार भी गिर जाये ।
मुझसे पूछने क्यों आये ॥६०॥

जब घर की दीवारें गिर जाती हैं, तब वे मुझसे पूछने के लिये नहीं आती हैं। ऐसे ही जब राख की दीवार गिर जाये, तब वह मुझसे पूछने क्यों आये ? जब चैतन्य महल के ध्यानी की मोह की धूल उड़ जाती है, तब उस धूल की ओर भी ध्यान नहीं जाता, फिर राख की दीवार का तो कहना ही क्या ?

काल की काली घटा आवे ।
राख दीवार पलक गिरावे ॥
वो काल न आतम निकटावे ।
पुद्गल में भी जिया न जावे ॥६१॥

काल की काली घटा आती है और राख की दीवार को पलभर में गिरा देती है। परन्तु काल आत्मा के निकट भी नहीं आता। जब जीव द्रव्य का पड़ोसी दूसरा पुद्गल द्रव्य भी जीव द्रव्य के निकट नहीं आता, तब छठवाँ काल द्रव्य और उसमें भी व्यवहार काल की काली घटा मेरा क्या कर सकती है ? मैं काल की सीमा के पार त्रिकाल चैतन्य महल हूँ।

हैं ईंट रेत सीमेंट रु पानी ।
अब दीवार खड़ी हो जानी ॥
हड्डी मांस चमड़ी खून सब ।
पल में राख दीवार हो अब ॥६२॥

जैसे ईंट, रेत, सीमेंट और पानी आदि पदार्थ तैयार हैं, बस कुछ ही काल में दीवार खड़ी हो जाने वाली है। ऐसे ही हड्डी, मांस, चमड़ी और खून आदि पदार्थ तैयार हैं, बस कुछ ही काल में राख की दीवार का ढेर हो जाने वाला है। चैतन्य महल, निष्कंटक मोक्षमार्ग, सद्गुरु का योग आदि समस्त समवाय से निकट काल में मोक्ष महल का निर्माण होगा।

चैतन्य राज महल भूलकर ।
खेले राख खिलौने खुलकर ॥
विगत अनंत खिलौने टूटे ।
निकुल मोहभाव नहीं छूटे ॥६३॥

हे जीव ! तू चैतन्य राज महल को भूलकर राख के खिलौने संग ही तन्मय होकर खेला। भूतकाल में राख के अनंत खिलौने टूट चुके, फिर भी खिलौने के प्रति मोहभाव नहीं छूटा। बच्चे महल के आंगन में पड़ोसी संग खेलते हैं, सम्राट तो महल में आसीन है। आत्मा की अशुद्ध पर्याय राख के खिलौने में एकत्व करती है, जीव राजा स्वयं चैतन्य महल है।

सोलह मात्रा से स्वर्ग स्मरण ।
चार चरण से सुधी गुणचरण ॥
अरे मोक्ष महल फिकर नाहीं ।
मैं नित चैतन्य महल मांही ॥६४॥

''राख की दीवार का पड़ोसी'' की चौपाई रचना से सोलह मात्रा और चार चरण का विचार आया। सोलह मात्रा से सोलह स्वर्ग और चार चरण से अविरत सम्यग्दृष्टी का चौथा गुणस्थान स्मरण में आया। अरे कैसी ज्ञानी की दशा ! जिन्हें स्वर्ग तो दूर, चौथा गुणस्थान तो दूर, मोक्ष महल की भी चिंता नहीं है। वे तो नित्य चैतन्य महल की जागृति के बल पर स्वरूप चिंतन एवं ध्यान में लीन हैं।

जब राख की दीवार चाले ।
मानत अंतिम यात्रा हाले ॥
पिंजड़े मांहि ना पक्षी है ।
चैतन्य महल तो साक्षी है ॥६५॥

जब राख की दीवार चलती है, तब ज्ञानी यह मानते हैं कि इस पड़ोसन की अंतिम यात्रा चल रही है। ज्ञानी की दृष्टि निराली होती है। वे मानते हैं कि देहरूपी पिंजड़े में चैतन्य पक्षी कहीं नहीं है। चैतन्य महल तो पड़ोसन की अंतिम यात्रा का साक्षी है। चैतन्य लोक की श्रद्धा से लोकालोक के साक्षी होने की दशा प्रकट होती है।

मलबे के लिये कार्य कारी ।
लकड़ी से बनी हाथ लारी ॥
राख की दीवार गिरती रे ।
लकड़ी बीच चिता जलती रे ॥६६॥

जैसे मकान गिरने पर मलबे को हटाने में लकड़ी से बनी हाथ लारी उपयोग में आती है। ऐसे ही राख की दीवार गिरने पर चिता को जलाने के लिये लकड़ी उपयोग में आती है। त्रिकाल जलती चैतन्य ज्योति का चिंतन हों और उपयोग इसी में स्थिर हों, जिससे समस्त कर्मों की चिता स्वयं ही जल जावें।

सीमेंट दीवार घर पाया ।
राख की दीवार की काया ॥
सीमेंट रु राख भेद कैसा ।
देखता मैं रँग एक जैसा ॥६७॥

घर की दीवारें सीमेंट से बनी हैं और काया स्वयं राख की दीवार है। सीमेंट और राख में कैसा भेद ? मुझे तो दोनों का रंग एक जैसा ही दिखाई देता है। चैतन्य रंग में रंग जाने पर पुद्गल के रंगों में रुचि ही नहीं रहती है। महल और श्मशान समान दिखाई देते हैं। जब पर्याय द्रव्य की ओर पिचकारी छोड़ती है और होली खेलती है, तब कोई गोली तो क्या, गाली की ओर भी ध्यान नहीं जाता।

दीवार गिरी मलबा लेकर ।
आय गंगा बेन को देकर ॥
फूल के नाम राख बहाने ।
बस जाता गंगा निपटाने ॥६८॥

एक बार मकान की दीवार गिर जाने पर मैं उसके मलबे को गंगा बेन को देकर आया था। जब वह घटना स्मरण में आती है, तब संसारीजनों की वे क्रियाएँ भी स्मरण में आती हैं कि लोग परिवारजन की राख की दीवार बिखरने के बाद राख को फूल का नाम देकर गंगा नदी में बहाने जाते हैं, बस विधि–विधान निपटाकर मानते हैं कि अंतिम कर्तव्य निभाया। अज्ञानी राख को फूल कहता है, ज्ञानी फूल को भी राख मानते हैं।

ऐसी दीवार नहीं होती ।
जो दीवारों को जन्माती ॥
राख दीवार ही ऐसी है ।
राख दीवारें बनाती है ॥६९॥

लोक में ऐसी दीवार नहीं होती, जो दीवारों को जन्म देती हो। बस राख की दीवार ही ऐसी होती है, जो राख की दीवारों को जन्म देती है। कैसा है यह स्वरूप ! शुद्ध द्रव्य के आश्रय से जन्म लेने वाली पर्यायें भी शुद्ध ही उत्पन्न होती हैं और अजीव तत्त्व के आश्रय से उत्पन्न होने वाला राग ज्ञान स्वभावी न होने से जड़ कहा जाता है।

ऐसी दीवार नहीं सारी ।
जो दीवारों की हत्यारी ॥
राख दीवार ही ऐसी है ।
राख दीवारें मारती है ॥७०॥

लोक में सभी दीवारें ऐसी नहीं होती, जो दीवारों की हत्यारी हो। परन्तु राख की दीवार ही ऐसी है, जो राख की दीवार को मारती है। पंचेन्द्रिय राख की दीवार से होने वाला पंचेन्द्रिय राख की दीवार का घात महाहिंसा नहीं है। राख की दीवार में सुख मानकर तन्मय होना, अतीन्द्रिय भगवान आत्मा का घात महाहिंसा है, जिसके फल में अनंत दुःख हैं।

दोनों पुद्गल की दीवारें ।
रागी धोखा खावें सारे ॥
दीवारें तो रंगी रूपी ।
चैतन्य महल सदा अरूपी ॥७१॥

मकान की दीवार और राख की दीवार दोनों पुद्गल की दीवारें हैं। वे दीवारें धोखा नहीं देती, बल्कि रागी स्वयं के राग के कारण धोखा खाते हैं। पुद्गल दीवारें तो स्पर्श, रस, गंध, वर्ण आदि गुणवान रूपी हैं, जबकि चैतन्य महल सदैव अरूपी है, चैतन्य स्वरूपी है। भगवान आत्मा अरूपी होने से अनुभूति के समय हज़ारों सूर्य के प्रकाश के पुंज जैसा अनुभव नहीं होता। प्रकाश का अनुभव, पुद्गल का अनुभव है। स्वरूपानुभव आत्मानुभव है।

चैतन्य महल है चेतनमय ।
राख की दीवार है जड़मय ॥
चैतन्य राज महल अरूपी ।
राख की दीवार बहु रूपी ॥७२॥

चैतन्य महल चेतनमय है और राख की दीवार जड़मय है। चैतन्य राज महल अरूपी है, जबकि राख की दीवार बहु रूपी है। राख की दीवार नाटक का एक पात्र है। नाटक उसे ही कहते हैं, जिसमें अटकना नहीं है। राख की दीवार में एकत्व न कर चैतन्य महल में एकत्व करना ही संसार के नाटक से मुक्त होकर मोक्ष महल में जाने का उपाय है।

राख दीवार दीवार बनत ।
दीवार राख दीवार जनत ।।
राख दीवार रु दीवार सब ।
रे सबसे पार चैतन्य रब ।।७३।।

राख की दीवार पलटकर कालांतर में दीवार भी बन जाती है और दीवार भी पलटकर कालांतर में राख की दीवार बन जाती है। परन्तु राख की दीवार एवं दीवार इन सबसे पार चैतन्य परमात्मा है। पुद्गल द्रव्य की पर्याय पलटकर फिर भविष्य में ऐसी ही हो सकती है, जबकि आत्मा की पर्याय में मोक्ष प्रगट होने पर भविष्य में संसार अवस्था नहीं होगी। फिर संसार और मोक्ष से न्यारा चैतन्य महल ही परम तत्त्व है।

मानव राख समाये गागर ।
पक्षी की राख मुट्ठी मगर ।।
निराश मनु तू लख गोरैया ।
दो पंखों से गगन विजैया ।।७४।।

मनुष्य की राख घड़े में समा जाती है और पक्षी की राख तो मुट्ठी में ही समा जाती है। हे निराश मनुष्य ! तू उड़ती गोरैया को देख, जैसे दोनों पंखों से सारे आकाश को जीत लिया हो। हे साधक ! राख की दीवार के रूप–रंग, प्रकार–आकार आदि पर दृष्टि न करके चैतन्य के असीम गगन में असीम विहार कर।

घर में माल नहीं है पाला ।
खाली है ऊपर का माला ॥
राख दीवार न ज्ञान वाली ।
ऊपर का माला है खाली ॥७५॥

लोक में जिसके घर में माल नहीं होता, वे कहते हैं कि ऊपर का माला खाली है। ऐसे ही राख की दीवार में ज्ञान स्वभाव नहीं है, अतः बिना ज्ञान के दिमाग के लिये ऐसा कहते हैं कि ऊपर का माला खाली है। परन्तु ज्ञानी को सदैव जागृति रहती है कि ऊपर का माला खाली है, यह जानने वाला शुद्धात्मा परिपूर्ण है।

दीवार पर दीवार रचकर ।
पुकारे जाते मूर्ख कहकर ॥
राख भरे राख दीवार पर ।
मूढ़ पूजे तपस्वी वापर ॥७६॥

यदि लोक में कोई दीवार पर दीवार का निर्माण करे, तो लोग मूर्ख कहकर पुकारते हैं। परन्तु राख की दीवार पर भभूति लगाने वाले को मूढ़ तपस्वी मानकर पूजते हैं, यह देखकर उन दोनों के प्रति अत्यंत करुणा उत्पन्न होती है। उन दोनों को परमात्म दृष्टि से देखने पर उनका नहीं, बल्कि स्वयं का ही हित होता है।

मोही स्व दीवार में ठाने ।
या राख दीवार निज माने ॥
फिर राग में स्वरूप आभासी ।
चैतन्य महल स्वरूपवासी ॥७७॥

मोही धन–गृह आदि परिग्रह के कारण स्वयं का अस्तित्व मानते हैं या राख की दीवार में एकत्व करके शरीर को ही स्वयं की सत्ता मानते हैं। स्वरूप के आभासी अज्ञानी शुभराग में ही स्वयं की कल्पना करते हैं। इन सभी मिथ्यादृष्टियों से भिन्न स्वरूप वासी सम्यग्दृष्टी ज्ञानी धर्मात्मा चैतन्य महल के वासी होते हैं।

पूछते पता राजन को जब ।
बोले कीचड़ पास महल अब ॥
कैसा लगे ज़रा सोचो पल ।
मल-मूत चैतन्य महल ॥७८॥

जब किसी राजा को उनका पता पूछने पर वे उत्तर दे कि अभी कीचड़ के पास जो महल है, वही मेरी पहिचान है। पलभर के लिये ज़रा सोचो ! यह सुनकर कैसा लगेगा जब अशुचिमय देह के पास चैतन्य महल रहता हो, जब चैतन्य महल की पहिचान मल–मूत्र से निर्मित इस पड़ोसन से होती हो।

चैतन्य महल वैभव शाली ।
पड़ोसन पाई गटर नाली ॥
उगते हैं त्रिशूल अँगने में ।
शूल बिन फूल प्रासादों में ॥७९॥

चैतन्य महल से अधिक वैभवशाली इस जगत में और कुछ भी नहीं है। फिर भी वर्तमान में ऐसी पड़ोसन पाई है, जहाँ से मलिन गटर और नाली बहती है। चैतन्य महल के आँगन में मोह, राग और द्वेष के काँटे उगते हैं, जबकि चैतन्य महल ज्ञान रूपी फूल से महकता है। मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान एवं मिथ्याचारित्र इन तीन विकारों को भी त्रिशूल कहते हैं, जिनके अभाव से निष्कंटक मोक्षमार्ग पर यात्रा प्रारम्भ होती है।

गोबर से बनी दीवार सह ।
उसे तू नहीं कर पाता सह ॥
विष्टा की दीवार पड़ोसन ।
कैसे रह पाता है चेतन ॥८०॥

हे जीव ! जब तू गोबर से बनी कच्ची दीवार के साथ रहना सहन नहीं कर पाता, तब विष्टा से बनी इस राख की दीवार के पड़ोस में कैसे रह पाता है ? अज्ञानी सिर्फ विष्टा के संग रहता नहीं है, बल्कि स्वयं को विष्टा मानता भी है। शरीर के वजन को अपना मानता है कि मैं इतने किलोग्राम हूँ, जिस शरीर में विष्टा भी शामिल है। ज्ञानी विष्टा से न्यारे चैतन्य महल में एकत्व कर मोहमुक्त होते हैं, अरिहंत एवं सिद्ध होते हैं।

बैठते दीवार से टिककर ।
राख दीवार संग चिपककर ॥
दीवार गिरते खाय ठोकर ।
मरते समय वे जाय रोकर ॥८१॥

यदि कोई व्यक्ति दीवार से टिककर बैठे, तो दीवार के गिरने पर वह स्वयं गिरता है, ठोकर खाता है। ऐसे ही अज्ञानी राख की दीवार से चिपककर बैठता है अर्थात् शरीर में एकत्व करता है, जिससे मृत्यु होने पर अत्यंत व्याकुल होकर देह परिवर्तन करता है। ज्ञानी राख की दीवार के गिरने से पहले ही राख की दीवार से दूर अपरिवर्तित चैतन्य महल में स्थित हैं, अतः सारे जगत के परिवर्तन से अप्रभावित रहते हैं।

दीवार पास बैठे टिककर ।
मन होता है लेटे जाकर ॥
राख दीवार संग मोही ।
क्यों नाहीं होवें निर्मोही ॥८२॥

जब कोई व्यक्ति लम्बे काल से दीवार से टिककर बैठा हो, तब उसे ऐसा विचार आता है कि अब दीवार से दूर जाकर विश्राम करुँ। परन्तु अनंत काल से राख की दीवार से टिककर बैठने वाले मिथ्यादृष्टी को चैतन्य महल में विश्राम कर मोह रहित होने का विचार क्यों नहीं आता ? हे ज्ञान दीपक ! स्वरूप सावधान होना ही परम विश्राम है।

दीवार मोहनी चाहो तो ।
एक सफ़ेद रंग ही पोतो ॥
राख दीवार कारी गोरी ।
अपनापन करना है चोरी ॥८३॥

लोक में ऐसा कहते हैं कि यदि तुम मनमोहक दीवार चाहते हो, तो सिर्फ सफ़ेद रंग ही पोतो। दीवारदृष्टी अज्ञानी भी राख की दीवार को काली से गोरी करने का खेल खेलता रहता है। याद रहे, पड़ोसन काली हो या गोरी हो, उस पर अपना अधिकार जमाना, यह व्यभिचार है। राख की दीवार की मालकियत चोरी है, बेईमानी है। सम्यग्दृष्टी भले अव्रती हो, फिर भी अनंत चोरी के त्यागी हैं।

देवदास पंडित से पूछे ।
जीवित देव का श्राद्ध इच्छे ॥
राख दीवार तू मृत लखकर ।
चैतन्य महल की श्रद्धा कर ॥८४॥

जैसे ज़ख्मी दिल देवदास पर से निराश होकर पंडित से पूछता है कि क्या आप देवदास का श्राद्ध करवायेंगे ? देवदास जीवित होकर भी स्वयं को मृत व्यक्त करना चाहता है। हे चैतन्य देव ! समस्त परद्रव्यों से उदासीन होकर इस राख की दीवार को चैतन्य महल से न्यारी देख और सदैव मृत देख। भेदविज्ञान के बल पर यथार्थ श्रद्धा का जन्म होगा और चौरासी के चक्कर से मुक्ति होगी।

राख पड़ोसन को अज्ञानी ।
चेतन रु राख जाने ज्ञानी ॥
ज्ञानी जन दोनों को जाने ।
आपस में मिले नहीं माने ॥८५॥

अज्ञानी सिर्फ चैतन्य महल की पड़ोसन रूपी जड़ राख की दीवार को ही जानता है। ज्ञानी चैतन्य महल और राख की दीवार दोनों को जानते हैं। वे भले ही दोनों को जानते हैं, फिर भी दोनों द्रव्यों को स्वतंत्र मानते हैं। ज्ञानी को सहज भेदविज्ञान होता है। ज्ञानी ज्ञेय और ज्ञायक के संकरदोष अर्थात् मिलावट की मान्यता से मुक्त होने से जितेन्द्रिय जिन हैं।

ठीक तरह से चुनाव कीजे ।
सोच समझकर मोहर दीजे ॥
चैतन्य महल अर दूजा मल ।
चैतन्य महल चुन चलो महल ॥८६॥

आज तक बहुत बार चुनाव में बड़े–बड़े श्रेष्ठ नेताओं को चुना, लेकिन मोक्षमार्ग के प्रणेता सद्गुरु को नहीं चुना। हीरो और विलन में हीरो को चुना, किन्तु चैतन्य हीरे को न चुनकर मलिन देह को ही चुना। अब विकल्प तुम्हारे सामने हैं, विचार करो ! किस पर श्रद्धा की मोहर लगानी है ? चैतन्य महल चुनकर मोक्ष महल की यात्रा करनी है या मलिन राख की दीवार चुनकर नयी पड़ोसन की ओर यात्रा करनी है ? आकुलित मन या आनंद भवन ?

पड़ोसन यह राख की काया ।
विभाव चैतन्य महल छाया ॥
चैतन्य महल में श्रद्धा कर ।
राख-राग में कुछ भी ना कर ॥८७॥

यह राख की दीवार रूपी काया चैतन्य महल की पड़ोसन है, जबकि आत्मा की वैभाविक पर्यायें चैतन्य महल की परछांह है। पड़ोसन और परछांह से पार परिपूर्ण परमात्मा है। मैं चैतन्य महल हूँ, ऐसी श्रद्धा होने पर ज्ञानी स्वयं को राख की दीवार एवं रागादि विकार का अकर्ता मानते हैं, वे निकट काल में राख की दीवार रूपी कल एवं विकारी भाव रूपी कालिमा से मुक्त हो जाते हैं।

आँगन उगा राग गुरु सेवा ।
ना आवे महल में गुरुदेवा ॥
यह विचारकर चेतन ध्यानी ।
हो गये बस महा विज्ञानी ॥८८॥

गुरुदेव की सेवा करने का भाव चैतन्य महल के आँगन में उगा काँटा है। जब गुरुदेव के प्रति उत्पन्न होने वाला राग भी चैतन्य महल में प्रवेश नहीं कर सकता, तब गुरुदेव चैतन्य महल में कैसे प्रवेश पा सकते हैं ? ऐसा विचार कर गुरुदेव से उपयोग हटकर चैतन्य तत्त्व में स्थिर होता है। ज्ञानी केवलज्ञानी होते हैं, महा विज्ञानी होते हैं। समस्त कर्मों से मुक्त होकर महा वैज्ञानिकों के मेले में अकेले निवास करते हैं।

राख दीवार के जनम मरण ।
जिनराज राग तो तेज करण ॥
राख रु राग से महल न्यारा ।
चैतन्य महल रब का यारा ॥८९॥

चैतन्य महल की पड़ोसन राख की दीवार के जन्म–मरण हैं। यद्यपि जिनेन्द्र भगवान एवं वीतरागी गुरु के प्रति उत्पन्न होने वाला राग भी अति प्रशस्त परिणाम है। फिर भी राख की दीवार एवं राग के विकार से न्यारा चैतन्य महल ही दृष्टि का विषय है। वीतरागी परमात्मा भी चैतन्य महल में लीन हैं। चैतन्य महल में लीन होकर ही वीतरागी परमात्मा हुए हैं।

भव अनंत पड़ोस में बीते ।
मोह ज़हर को पीते-पीते ॥
देख धर्मेन्द्र कभी न भागे ।
बस चैतन्य महल में जागे ॥९०॥

अनंत भव मोह रूपी ज़हर पीकर अनंत जन्म–मरण करके ही बीत गये। अनंत भव मोह रूपी शराब पीकर मोटी–पतली पड़ोसन में अपनापन करके ही बीत गये। सम्यग्दृष्टी ज्ञानी धर्मात्मा संयोगों से भागते नहीं हैं, वे तो सिर्फ चैतन्य महल में जागते हैं। दृष्टि खुलने पर मोह का अंधापन मिटता है। आत्मा की प्रजा को अर्थात् श्रद्धा गुण की पर्याय को सत्ता स्वरूप द्रव्य का दर्शन होता है।

द्रव्यदृष्टि से सब नारी-नर ।
कौवा कोकिला गाय वानर ॥
चैतन्य का महल ही देखे ।
राख दीवार से पर पेखे ॥९१॥

द्रव्यदृष्टि से सभी नर–नारी आदि मनुष्य, गाय–वानर आदि पशु एवं कौवा–कोकिला आदि पक्षी चैतन्य महल ही दिखते हैं। सम्यग्दृष्टी प्रत्येक चैतन्य महल एवं राख की दीवार को जुदा देखते हैं, श्रद्धा में जुदा मानते हैं। यह कैसा चैतन्य परमात्माओं का मेला ? मजबूर परमात्मा राख की दीवार के वस्त्र संग आँखों के सामने आये, फिर भी उन्हें वस्त्र के रूप में न देखना और परमात्मा के रूप में देखना, यही निष्कारण करुणा है।

घना अंधियारा छाये जब ।
दीवार छाया होय गायब ॥
रे ज्ञान दीपक प्रकाश महल ।
पर्याय दृष्टि का होवत हल ॥९२॥

जब घना अंधकार छा जाये, तब दीवार की परछांह का व्यय हो जाता है। ऐसे ही जब ज्ञान दीपक प्रज्वलित होता है, तब पर्याय में प्रज्वलित ज्ञान दीपक के प्रकाश से पर्यायदृष्टि का व्यय हो जाता है। पर्यायदृष्टि रूप मिथ्यादृष्टि नष्ट हो जाती है। प्रत्येक आत्मा कर्मोपाधिजन्य भावों से न्यारा परमात्मा दिखाई देता है। पर्यायदृष्टि का हल होने पर संसार का खेल भी समाप्त हो जाता है।

दो द्रव्यों के बीच सदा की ।
देखे दीवार अकरता की ॥
राख दीवार बिन होने पर ।
शुद्धात्मा बसे लोक ऊपर ॥९३॥

जो आत्मा दो द्रव्यों के बीच अकर्तावाद के सिद्धांत की वज्र की दीवार का दर्शन कर लेता है, वह शुद्धात्मा राख की दीवार से मुक्त होकर लोक के अग्र भाग पर सिद्धशिला पर विराजमान होता है। भले ही मुनि पर्वत पर आरोहण करते दिखाई देते हों, फिर भी मुनिराज की परिणति चैतन्य शिखर पर आरोहण करती है। वास्तव में सिद्ध परमात्मा लोक के शिखर पर नहीं, बल्कि चैतन्य शिखर पर विराजमान हैं।

दीवार मांहि बाहर भीतर ।
भेद कर्त्ता गये ना भीतर ॥
राख दीवार चैतन्य महल ।
जो एक माने मोही कहल ॥९४॥

बड़े शहरों में घर (फ्लैट) की दीवारों के भीतर रंग करने का विचार घर के सदस्य करते हैं और दीवारों के बाहर रंग करने का विचार सभी मकान के सदस्य करते हैं। एक ही दीवार में भीतर एवं बाहर ऐसे भेद करने वाले चैतन्य महल एवं राख की दीवार के बीच भेद जानकर स्वरूप में लीन न हुए। वे स्व–पर को एक मानकर मोहमयी ही रह गये।

कंटक चुभता राख पड़ोसन ।
चाह शूल दूर अँगन वासन ॥
मैं चैतन्य महल शिववासी ।
ज्ञाता दृष्टा उभय उदासी ॥९५॥

मार्ग पर चलते ज्ञानी के पैर में भी काँटा चुभता है और काँटा निकालने का विकल्प भी उठता है, परन्तु वे मानते हैं कि लकड़ी का काँटा मेरी पड़ोसन को चुभा है और काँटा निकालने का विकल्प रूपी काँटा चैतन्य महल के आँगन में उगा है। मैं चैतन्य महल सदैव आनंद भवन वासी हूँ, ऐसा मानकर वे दोनों काँटों की स्थिति के ज्ञाता–दृष्टा रहते हैं और स्वरूप में अभेद होकर संसार से विदा होते हैं।

पड़ोसन पड़ोसन होय निकट ।
पड़ोसन पड़ोसन भोग विकट ॥
जब दो पुद्गल मिले नाही ।
तो जाय किस विध जीव मांही ॥९६॥

ज्ञानी दुःख स्वरूप भोगों को भोगते नहीं, बल्कि भोगों को जानते हैं। सम्यग्दृष्टी चक्रवर्ती रानियों से मिलते हैं, परन्तु वे मानते हैं कि निज परमात्मा की पड़ोसन किसी पर परमात्मा की पड़ोसन के निकट जानने में आ रही है। जब राख की दीवार रूपी दो पुद्गल पड़ोसन एक–दूसरे में मिलती नहीं हैं, तब राख की दीवार रूपी पुद्गल द्रव्य जीव द्रव्य में कैसे मिल सकता है? वास्तव में अनंत सिद्ध परमात्मा एक–दूसरे में नहीं स्वयं में ही निवास करते हैं।

चार दीवार में तन लेटत ।
ज्ञानी राख का बीम देखत ॥
कमरे में जब देह खड़ा हो ।
राख का ज्यों कॉलम गड़ा हो ॥९७॥

जब चार दीवार के भीतर कमरे में शरीर लेटता है, तब ज्ञानी शरीर को राख का बीम देखते हैं, जिसमें लोहे के स्थान पर हड्डियाँ हैं। जब कमरे में देह खड़ा हो, तब ज्ञानी को राख का कॉलम दिखाई देता है। जैसे कॉलम एवं बीम के आधार पर छत टिकती है, ऐसे ही निश्चय एवं व्यवहार के आधार पर ज्ञानी–मुनि का धर्म टिकता है। याद रहे, कॉलम है, तो बीम है। निश्चय है, तो ही व्यवहार है।

दीवार पर छिपकली गोचर ।
छिपकली दीवार अगोचर ॥
लकड़ी की राख बहुत देखी ।
लकड़ी को राख नहीं पेखी ॥९८॥

अज्ञानी को दीवार पर छिपकली ज्ञान में जानने में आती है, परन्तु छिपकली स्वयं ही राख की दीवार है, ऐसा जानने में नहीं आता। उसने लकड़ी के जलने के पश्चात् राख बहुत बार देखी है, लेकिन लकड़ी को ही राख के रूप में नहीं देखा है। शरीर जलकर राख होता बहुत बार देखा है, परन्तु शरीर को ही राख की दीवार नहीं देखा है। उसने सिर्फ यही पढ़ा है कि अशरीरी सिद्ध परमात्मा होते हैं, परन्तु यह नहीं देखा कि मैं स्वयं परमात्मा हूँ , प्रत्येक आत्मा परमात्मा है।

राख दीवार की तस्वीरें ।
है दीवार पर लटकती रे ॥
जिनके पड़ोस की तस्वीरें ।
चैतन्य महल वासी हीरे ॥९९॥

ज्ञानियों की जो तस्वीरें दीवार पर लटकती देखते हैं, वास्तव में वे ज्ञानी की तस्वीरें नहीं, बल्कि उनकी पड़ोसन की तस्वीरें हैं। जिनकी पड़ोसन की वे तस्वीरें हैं, वे ज्ञानी तो चैतन्य महल वासी हीरे हैं। सिद्ध परमात्मा की अंतिम राख की दीवार रूपी पड़ोसन की तस्वीरें वर्तमान में दीवार पर लटकती हैं, परन्तु सिद्ध परमात्मा वर्तमान में लोक के अग्रभाग पर लटकते हैं, स्थित हैं।

दीवार दरपण में प्रकासे ।
राख ज्ञान में यूं प्रतिभासे ॥
दरपण मांहि दीवार नाही ।
ज्ञान में भी राख ना जाहीं ॥१००॥

जैसे दीवार दर्पण में प्रतिबिंबित होती है, ऐसे ही राख की दीवार ज्ञान दर्पण में प्रतिबिंबित होती है। जैसे दर्पण में दीवार नहीं है, ऐसे ही ज्ञान दर्पण में राख की दीवार नहीं है। इस रहस्य को समझने के लिये ज्ञान दर्पण सहस्त्री कृति में प्रतिपादित सहस्त्र दृष्टांत उपयोगी हो सकते हैं। इतना ही नहीं, प्रत्येक आत्मा परिपूर्ण स्वच्छ ज्ञान दर्पण में लीन होकर शुद्धोपयोगी हो सकता है।

मलबे में मलबा सब देखे ।
महल में मलबा सुधी देखे ॥
राख को राख सब जन माने ।
चाम को राख सज्जन माने ॥१०१॥

मकान गिरने के बाद मलबे में मलबा तो सभी को दिखाई देता है, परन्तु ज्ञानी वे हैं, जिन्हें महल में ही मलबा दिखाई देता है। मुर्दे की राख को सभी लोग राख मानते हैं, लेकिन ज्ञानी चमड़े को ही राख मानते हैं अर्थात् चमड़ा एवं राख ऐसे भेद जिनकी दृष्टि में नहीं हैं, वे ही सम्यग्दृष्टी महापुरुष हैं। ज्ञानी को ज्ञान की प्रत्येक पर्याय में ज्ञान का ही दर्शन होता है, ऐसे ही पुद्गल की प्रत्येक पर्याय में पुद्गल ही दृष्टि में आता है।

महामहल फूले न समाये ।
मलबा लॉरी में आ जाये ॥
राख दीवार जो खाट शयन ।
राख घड़े में देखते नयन ॥१०२॥

अज्ञानी महामहल में एकत्व करके फूला नहीं समाता, परन्तु महामहल के गिरने के बाद देखता है कि विराट महल का मलबा लॉरी में समा जाता है। ऐसे ही बहुत बड़ी राख की दीवार आलीशान पलंग पर सोती है, लेकिन मुर्दे की राख एक छोटे से घड़े में समाती देखी जाती है। हे ज्ञान दीपक ! फिर बड़प्पन का गुरूर क्यों ?

दीवार लगा ए-सी जानों ।
ए-सी रूप अचेतन मानों ॥
राख दीवार पर भी ए-सी ।
आत्मा चेतन सत्ता ऐसी ॥१०३॥

दीवार पर लगा एयर कंडीशनर (वातानुकूलक उपकरण) जानो, पर उसे अचेतन मानो। राख की दीवार के पड़ोस में भी ए–सी रहता है। अंग्रेज़ी में पहला अक्षर 'ए' और तीसरा अक्षर 'सी' को सुनते–पढ़ते समय जागृति रहे कि आत्मा चेतन सत्ता स्वरूप तत्त्व है एवं किसी भी ऋतु में शांत स्वभावी है, जिसमें क्रोधादि विकारों की अग्नि का प्रवेश नहीं हो सकता।

चार दीवार में रहना चाहो ।
भाड़ा चुकाने कमाने जावो ॥
राख की दीवार रखना चाहो ।
पाप रु पुण्य कमाने जावो ॥१०४॥

जैसे चार दीवारों से बने किराये के मकान में रहने की चाह से व्यक्ति किराया चुकाने हेतु कमाई करने जाता है। ऐसे ही यदि तुम किराये की राख की दीवार के मकान में रहना चाहते हों, तो शुभाशुभ भावों की मजदूरी कर पुण्य एवं पाप की कमाई करने जाओ। और हाँ, तुम निजी मोक्ष महल में वास करना चाहते हों, तो मजदूरी छोड़कर स्वयं को जीव राजा मानकर निजात्मा के ध्यान में आसीन होकर आज़ाद हो जाओ।

किराये के भवन का वासी ।
खर्चा कर न लगा ले फांसी ।।
राख दीवार मांहि प्रवासी ।
पुद्गल ध्यानी नित परवासी ।।१०५।।

जो व्यक्ति किराये के मकान में रहता है, वह इतना तो समझदार होता है कि अपने सिर पर कर्ज का बोझ उठाकर किराये के मकान में श्रृंगार करना ठीक नहीं है। लेकिन वही व्यक्ति राख की रेलगाड़ी में यात्रा करता है और गाड़ी को सजाने में लीन रहता है। पुद्गल का ध्यानी सदैव परदेस में प्रवासी ही रहता है, स्वदेस में निवासी नहीं होता है। सिद्धों की पुकार है कि पंछी पिंजरा छोड़ के आओ, क्योंकि पिंजरे का अंत है और वह सुख बिन है। आत्मा की उम्र अनंत है और निज घर में ही आनंद है।

दीवारों के सुन गुणगाने ।
मूढ़ प्रशंसा अपनी माने ।।
कान्तिमय राख दीवार सुन ।
माने सुधी पड़ोसी की धुन ।।१०६।।

घर की दीवारों की प्रशंसा सुनते ही अज्ञानी मानता है कि मेरी तारीफ़ हो रही है। परन्तु कान्तिमय शोभायमान राख की दीवार सुनकर सम्यग्दृष्टी मानते हैं कि पड़ोसन के गुणगान गाये जा रहे हैं। मैं तो अनंत गुणाधिपति भगवान आत्मा हूँ , मैं सांत पौद्गलिक वाणी द्वारा अनंत वैभवशाली चैतन्य परमात्मा कैसे व्यक्त हो सकता हूँ ? पड़ोसन के मकान की तारीफ़ सुनकर वह मकान गिर जाने की भावना बहुत भायी, लेकिन कभी राख की दीवार सदा के लिये गिर जाये ऐसी भावना भायी ?

घर दीवारों के होवे बिल ।
राख दीवारों में रहे दिल ॥
बिल बोला सारा दिल खोला ।
पर चैतन्य महल अनमोला ॥१०७॥

दीवारों से बने मकान को खरीदने के लिये धन होता है, राख की दीवारों में दिल होता है, विचार करने हेतु मन भी होता है। तन, मन और धन समर्पित करके चैतन्य महल को पाना चाहा, परन्तु चैतन्य महल की प्राप्ति पुद्गल समर्पित करके नहीं होती है। जब द्रव्य की पर्याय द्रव्य में समर्पित होती है, तब चैतन्य महल ही नहीं, मोक्ष महल भी प्रकट होता है। पूर्ण शुद्ध द्रव्य ही नहीं, पूर्ण शुद्ध पर्यायें भी प्रकट होती हैं।

खिड़की को दीवार निरखत ।
दीवार पर परदे ना रखत ॥
मुँह तन राख दीवार जाना ।
मुआ क्या अम्बर से सजाना ॥१०८॥

जब खिड़की और दीवार में भेद नहीं दिखाई देता, तब फिर ऐसी स्थिति भी आती है कि दीवार की भाँति खिड़की पर भी पर्दा लटकाने का भाव नहीं आता है। ऐसे ही जब चेहरे की भाँति सारा शरीर समान देख लिया, तब ऐसी स्थिति भी प्रकट होती है कि जैसे भूतकाल में मुँह को वस्त्र से ढंकने का भाव नहीं आता था, ऐसे ही पूरे शरीर को अम्बर से ढंकने का भाव नहीं आता है, वे ज्ञानी अब मुनि धर्म धारण करते हैं।

दीवार में ज्यों नल लगा हो ।
जिसमें से पानी बहता हो ॥
राख दीवार त्यों नल नाली ।
तन से मूत्र बहाने वाली ॥१०९॥

जैसे शौचालय में दीवार में लगे नल में से पानी बहता दिखाई देता है, ऐसे ही ज्ञानी को राख की दीवार की नल नाली से मूत्र बहता दिखाई देता है, जिसमें नहीं बह जाने वाला ज्ञान दिखाई देता है। कैसा है यह स्वरूप ! शुद्ध जल राख की दीवार छूकर मलिन होकर बाहर की ओर बहता है, जबकि अशुद्ध पर्याय चैतन्य महल की स्पर्शना होते ही निर्मल होती है और परिणति भीतर की ओर बहती है। एक समय ऐसा आता है कि नौ द्वारों से मुक्त होता है और मोक्ष महल के प्रवेश द्वार से सिद्धपुर में प्रवेश होता है।

रे राख का खिलौना छूटे ।
मरण पूर्वी निंदिया टूटे ॥
पाया देवल राख खिलौना ।
वीतरागी संत जो होना ॥११०॥

हे ज्ञान दीपक ! राख का खिलौना छूटकर मृत्यु आये, उस पल से पहले ही मोह की नींद टूटे। गुरुदेव सिर्फ चैतन्य परमात्मा कहकर पुकारते हैं, जागना या नहीं जागना तुम पर ही निर्भर है। राख से बना यह देवलरूपी खिलौना टूट जाये, उससे पहले ही बच्चा जाग जाये। जिससे यह राख का खिलौना वीतरागी मुनि धर्म का पालन करने में उपयोगी हो सके।

घर दीवार राग परिहारी ।
वे साधु वन-उपवन विहारी ।।
राख की दीवार है ऐसी ।
वीतरागी सह रहे वैसी ।।१११।।

घर की दीवारों का राग छूटते ही गृहस्थ दशा त्यागकर मुनिधर्म अंगीकार कर वन–उपवन विहारी साधु होते हैं। राख की दीवार एक मात्र ऐसी दीवार है, जो मुनि संग ही नहीं, पूर्ण वीतरागी दशा प्रकट होने पर भी अरिहंत परमात्मा के संग भी रहती है। एक दृष्टि से राख की दीवार का योग होने से अरिहंत परमात्मा भी संसारी हैं और दूसरी दृष्टि से राख की दीवार में एकत्व न होने से सम्यग्दृष्टी भी मुक्त है, दृष्टिमुक्त है। अरिहंत भगवान हो या सम्यग्दृष्टी हो, उनकी दृष्टि में तो एक मात्र चैतन्य महल ही है।

पड़ोस घर में पावक पावे ।
स्वार्थी ज्ञाता रहे बुझावे ।।
राख दीवार में हो ज्वाला ।
विकल्प टालने भोज डाला ।।११२।।

जैसे पड़ोसी के घर में आग लगे, तो वह आग फैलकर अपने घर में न आये, इस हेतु पड़ोसी के घर लगी आग को बुझाने जाते हैं। ऐसे ही राख की दीवार में भूख की आग लगने पर मुनि भी आत्मा में उत्पन्न होने वाली विकल्प की आग को टालने हेतु निर्दोष आहार के लिये निकलते हैं। यहाँ ज्ञातव्य है कि यदि भोजन कर लेने से विकल्प की आग बुझ जाती, तो भूतकाल में अनंत बार भोजन किया, फिर भी विकल्पों की आग बढ़ती गयी। भोजन से नहीं, बल्कि भोजन एवं भोजन के विकल्पों से चैतन्य महल न्यारा है, ऐसे भेदविज्ञान की वर्षा से विकल्प की आग बुझ जाती है।

विषयी दीवार मांहि आते ।
संतो वन-उपवन में जाते ॥
अरिहंत पण राख दीवारी ।
सिद्ध चेतन महल विहारी ॥११३॥

राख की दीवार को भोगने के लिये विषय भोगी दीवारों से बने मकान के भीतर आते हैं, जबकि चैतन्य महल का उपभोग करने हेतु संत महात्मा वन–उपवन में जाते हैं। अरिहंत परमात्मा भी राख की दीवार के पड़ोसी हैं, एक मात्र चैतन्य महल विहारी सिद्ध परमात्मा बिन पड़ोसन मुक्त हैं। तीर्थंकर परमात्मा के देह के परमाणु आज इस लोक में पहिचाने नहीं जाते, अतः प्रत्येक देह राख की दीवार ही है ऐसा विचार करो, जिससे पर से उदासीन होकर चैतन्य महल दृष्टि में आ सके।

छत के छेद से गगन देखा ।
बाहर जाकर कभी न लेखा ॥
राख आँख से पुद्गल जाना ।
ज्ञान मात्र को ना पहिचाना ॥११४॥

जैसे कोई व्यक्ति छत के छेद से आकाश को देखकर संतुष्ट हो रहा हो, वह व्यक्ति बाहर जाकर विराट आकाश को नहीं देखता है। अज्ञानी ने इन्द्रिय ज्ञान से पुद्गल को ही जाना, परन्तु ज्ञान मात्र चैतन्य तत्त्व को नहीं जाना, नहीं माना। जब राग से भिन्न चैतन्य सत्ता मात्र भगवान आत्मा दृष्टि में आता है, तब आत्मज्ञानी होता है। वे आत्मज्ञानी केवलज्ञानी होकर इन्द्रिय ज्ञान क्षय से अतीन्द्रिय ज्ञान से संपूर्ण लोकालोक को जानते हैं।

दीवार पर बत्ती बटन ज्यों ।
राख दीवार में है मन त्यों ॥
चालु बटन से जलती बत्ती ।
मन से चलती विचार बत्ती ॥११५॥

जिसप्रकार दीवार पर बत्ती एवं बटन लगे होते हैं, उसीप्रकार संज्ञी पंचेन्द्रिय राख की दीवार में द्रव्यमन की बत्ती होती है। कहते हैं कि जैसे ही बत्ती का बटन चालू होता है कि बत्ती जलती है, ऐसे ही मन के निमित्त से विचार की बत्ती चलती रहती है, भावमन का कार्य होता है। जैसे विद्युत प्रवाह के अभाव में बटन चालू होने पर भी बत्ती नहीं जलती, ऐसे ही आत्मा के अभाव में द्रव्यमन होने पर भी विचार नहीं होता है।

रे चैतन्य महल के आँगन ।
लगी है परभावों की अगन ॥
महल वासी दो घड़ी जावक ।
बुझ जाये वैभाविक पावक ॥११६॥

चैतन्य महल के आँगन में परद्रव्य के लक्ष्य से उत्पन्न होने वाली परभावों की आग लगी है। अध्यात्म मार्ग में आँगन में जाकर आग को बुझाना कदापि सम्भव नहीं है। चैतन्य महल में दो घड़ी लीन होने पर विभाव की अग्नि अपने आप ही बुझ जाती है और निकट काल में पड़ोसन भी बिखर जाती है। बच्चे से कहते हैं कि दो घड़ी शांति से बैठ। ज्ञानी कहते हैं कि दो घड़ी शांत स्वरूपी भगवान में वास कर, तुझे केवलज्ञान प्रकट होगा।

राख दीवार जु पिंड पुद्गल ।
चैतन्य महल घनपिंड बगल ॥
पुद्गल जो होता पूरण गल ।
चैतन्य महल ना जाय पिघल ॥११७॥

राख की दीवार पुद्गल परमाणुओं का पिंड है, जबकि पुद्गल पिंड के पड़ोस में चैतन्य महल अनंत गुणों का घनपिंड है। पूरण–गलन स्वभावी होने से राख की दीवार का स्वभाव ही बैरबिखेर होना है, जबकि चैतन्य तत्त्व घनपिंड होने से बैरबिखेर नहीं होता है और न ही उसमें परद्रव्य का प्रवेश हो सकता है। जैसे अतिसूक्ष्म अविभाज्य पुद्गल परमाणु खंडित नहीं हो सकता, ऐसे ही अरूपी चैतन्य महल में कदापि भेद नहीं हो सकता।

घर दीवार परिग्रह जानो ।
राख दीवार पड़ोस मानो ॥
शरीर अगर परिग्रह होता ।
तो अरिहंत को पाप होता ॥११८॥

घर की दीवार को परिग्रह जानो, परन्तु राख की दीवार को सिर्फ पड़ोसन मानो। यदि शरीर परिग्रह होता, तो अरिहंत भगवान शरीरी होने से उन्हें भी पाप का सद्भाव मानना पड़ेगा। शरीर परिग्रह नहीं है, अतः पाप नहीं है। परन्तु आत्मा में उत्पन्न होने वाला हास्य का भाव नोकषाय होने से परिग्रह है, पाप है। इसलिये अरिहंत भगवान मुखी तो होते हैं, परन्तु हँसमुखी नहीं होते हैं। उनकी मुद्रा तो शांत होती है। आत्मानुभूति का लक्षण हास्य नहीं, बल्कि शांति है।

हवा महल नहीं हवा ऊपर ।
पड़ोसन तीर्थंकर हवा पर ॥
पड़ोसन अल्प ही ऊपर चल ।
सिद्धपुरवासी सदा अविचल ॥११९॥

जयपुर में हवा महल है, वह भी हवा पर नहीं है, बल्कि ज़मीन पर है। पंचेन्द्रिय पुर पर विजय प्राप्त कर चुके तीर्थंकर भगवान की पड़ोसन ज़मीन से अल्प ही ऊपर हवा में विहार करती है। सिद्ध भगवान तो पृथ्वी को त्यागकर सिद्धपुर वासी होकर अविचल पद को प्राप्त हुए हैं। हे जीव ! वाह वाह के नशे में हवा में मत उड़, सब हवा निकल जायेगी, हवा में यात्रा करनी है, तो पूर्ण शुद्धता की उड़ान भर और लोकाग्र शिखर की ओर प्रस्थान कर।

मलबा ही देखो सभी महल ।
त्रिशला के पूत का भी कहल ॥
राख दीवार देख संहनन ।
रे वज्रऋषभ नाराच तन ॥१२०॥

जब सभी महल को मलबा देखने के लिये कहा है, तब त्रिशला माता के पुत्र वर्धमान का महल भी उनमें शामिल है। जब सभी देह को राख की दीवार के रूप में देखने के लिये कहा है, तब वज्रऋषभ नाराच संहनन शरीर भी उनमें शामिल है। लकड़ी में अटकने वाला अधर्मी और लोहे में अटकने वाला धर्मी कैसे हो गया ? जब नित्य के लक्ष्य से क्षणिक का बोध होता है, तब एक नहीं, समस्त निमित्तों से दृष्टि हट जाती है।

सब महल उड़ती धूल देखो ।
भरत का महल मिट्टी पेखो ॥
राख दीवार संस्थान लख ।
समचतुरस्त्र संस्थान रख ॥१२१॥

जब सभी महल को धूल देखने के लिये कहा है, तब भरत चक्रवर्ती का महल भी उनमें शामिल है। जब सभी देह को राख की दीवार के रूप में देखने के लिये कहा है, तब समचतुरस्त्र संस्थान शरीर भी उनमें शामिल है। रुपये में अटकने वाला अधर्मी और डॉलर में अटकने वाला धर्मी कैसे हो गया ? जब नित्य के लक्ष्य से क्षणिक का बोध होता है, तब एक नहीं, समस्त निमित्तों से दृष्टि हट जाती है।

राख को मंदिर कहूँ कैसे ।
मंदिर में जड़ मूरत पैसे ॥
राख दीवार है पर सत्ता ।
जाके पड़ोस रामा बस्ता ॥१२२॥

राख की दीवार को मंदिर कहने में भी मन मानता नहीं है। मैंने आदिनाथ भगवान के मंदिर अंदर जड़ मूर्ति देखी है और पर परमात्मा को भूलकर निज परमात्मा में लीन होने हेतु निर्मित मंदिर के भीतर दान पेटी में रुपयों का परिग्रह भी देखा है। अरूपी चैतन्य परमात्मा राख की दीवार में नहीं रहता, बल्कि राख की दीवार परद्रव्य की सत्ता है, जिसके पड़ोस में निज परमात्मा बस रहा है।

स्नानगृह के खुले दोनों नल ।
बहता रहता दोनों से जल ॥
अरे बहुत बहाया नेत्र-जल ।
मीता राग संसार काजल ॥१२३॥

जैसे स्नानगृह में दोनों नलों में से पानी बहता हो, ऐसे ही अनित्य संसार की राग की कालिमा से दुःख भोगकर दोनों आँखों से आँसू बहाये हैं। कैसी है कवि की कल्पना ! मुनिराज आत्मा के ध्यान में बैठे हैं, तब आनंद के अश्रु दोनों आँखों से बहते हैं और हथेली भर जाती है, अश्रु को पानी समझकर वन में पक्षी अश्रु पीते हैं और जीते हैं। ज्ञानी के अश्रु दूसरों को जीवन देते हैं और अज्ञानी के अश्रु दूसरों को मारते हैं। यह सिर्फ कवि की कल्पना ही है। अतीन्द्रिय सुख का पुद्गल से ही संबंध नहीं है, फिर अश्रुजल से कैसे ?

ज्यों राख राख को छूने से ।
छुटकारा ना हो मरने से ॥
त्यों सद्गुरु चरणों को छूकर ।
धरम न हो गुरुदेव बोलकर ॥१२४॥

जिसप्रकार एक मुर्दे की जली राख को दूसरे मुर्दे की जली राख छू लेती है, तो दूसरे आत्मा का जन्म और मरण से छुटकारा नहीं हो जाता। उसीप्रकार सद्गुरु की राख की दीवार के चरणों को छूने से या फिर अहो ! अहो ! सद्गुरु बोलने से जन्म और मरण से छुटकारा नहीं होता। हे परम ज्ञान दीपक ! जिसका जन्म और मरण ही नहीं है, ऐसे द्रव्य की स्पर्शना करने वाली पर्यायें जन्म एवं मरण करती होने पर भी जन्म एवं मरण से मुक्त हो जाती हैं, क्योंकि नित्य आत्मा का अनुभव भी नित्य है, पर्याय का लक्ष्य क्षणिक पर्याय नहीं, बल्कि नित्य द्रव्य ही है।

राख का मालिक तू नहीं है ।
जब राग महल मांहि नहीं है ॥
गुरुदेव करूँ क्या अर्पण पद ।
बस जाग दीपक अभेद अपद ॥१२५॥

चैतन्य तत्त्व की अनुभूति को उपलब्ध शिष्य सद्गुरु के प्रति मनोभाव व्यक्त करता हुआ पूछता है कि हे प्रभु ! मैं आपके चरण कमल में क्या अर्पण करूँ ? आपकी गुरुदक्षिणा क्या ? सद्गुरुदेव कहते हैं कि जब तू राख की दीवार का भी मालिक नहीं है एवं भक्ति का राग चैतन्य महल में नहीं है। फिर तू अर्पण भी क्या कर सकता है ? हे ज्ञान दीपक ! पर्यायों से पार, गुणों के अभेद एक चैतन्य तत्त्व की जागृति समय प्रतिसमय बनी रहे। गुरु को भी एक ओर दक्षिण दिशा में रख और चैतन्य असु की ओर यात्रा करना ही सद्गुरुदक्षिणा है।

प्रेमी को मिलने हो धक-धक ।
पर दीवार हो महा बाधक ॥
सिद्धों से मिलना हे साधक ।
पर राख दीवार है बाधक ॥१२६॥

जैसे प्रेमी पड़ोस में ही रहता हो और उसे मिलने के लिये हृदय में धक–धक होता हो, परन्तु एक दीवार ही महाबाधक बनती हो। ऐसे ही अनंत सिद्धों से मुलाकात की भावना भाने वाले साधक के लिये एक राख की दीवार ही बाधक बनती है। गहराई से देखे तो राख की दीवार भी नहीं, बल्कि मिथ्यात्व का कण ही बाधक बन रहा है। स्वयं की विपरीत श्रद्धा ही बाधक बन रही है।

सीमेंट दीवार गिर जावे ।
कैदखाने से भाग पावे ॥
अचरज होता बहुत मुझे तब ।
राख की दीवार न गिरे जब ॥१२७॥

लोक में ऐसे कैदी बहुत होते हैं, जो सीमेंट से बनी कारागृह की दीवारों को गिराकर बाहर निकल जाते हैं। मुझे बहुत आश्चर्य तो तब होता है, जब उन कैदियों से राख की दीवार ही नहीं गिर सकती। मंदिर और मस्जिद गिराने वाले देहरूपी देवल को गिराकर सिद्धों से मिलन क्यों नहीं चाहते ? गर्भ में बनी बच्चे की राख की दीवार को गर्भगृह में ही गिरा देने वाली निर्दयी माँ को क्या कभी यह विचार आता है कि बस अब तो चैतन्य महल रूपी ब्रह्म में निवास कर ऐसा ब्रह्मचर्य का पालन हों कि राख की दीवार ही गिर जाये ?

रे मोक्षमहल का जनम-मरण ।
चैतन्य महल अकार्य कारण ॥
जाकी रुचि मोक्ष महल नांहि ।
बस वे चैतन्य महल मांहि ॥१२८॥

मोक्ष महल भी पर्याय होने से उसके भी जन्म–मरण हैं। अकार्यकारणत्व शक्ति संपन्न भगवान आत्मा स्वयं चैतन्य महल है। जिनकी रुचि मोक्ष महल में भी नहीं हो, बस उन्हें ही चैतन्य महल की रुचि हो सकती है। चैतन्य तत्त्व सर्वप्रथम है और मोक्ष तत्त्व अन्तिम है। प्रथम तत्त्व में लीन होने पर अन्तिम तत्त्व की प्राप्ति होती है, अनंत की प्राप्ति होती है।

अज्ञानी की श्रद्धा जोवे ।
बिन दीवार अभागे होवे ॥
होवे ज्ञानी की सत्श्रद्धा ।
राख दीवारें बिना सिद्धा ॥१२९॥

अज्ञानी की मिथ्या श्रद्धा ऐसा मानती है कि दीवार से बने मकान बिना व्यक्ति दुर्भाग्यशाली होता है। परन्तु ज्ञानी की सम्यक् श्रद्धा यह मानती है कि राख की दीवार के बिना आत्मा दुर्भाग्यशाली नहीं, सच्चे अर्थों में सौभाग्यशाली होता है, मोक्ष वैभवशाली होता है, सिद्ध परमात्मा होता है। सिद्धक्षेत्र और कुछ भी नहीं, बस शुद्धात्मा के पड़ोस में गिरी राख की दीवार की निशानी है। सिद्धों की भूतकाल की कहानी है, इतिहास भूमि है।

राग जलकर राख हो जावे ।
दुःख चिंगारी न भड़कावे ॥
राख दीवार जब गिर जावे ।
महल पड़ोसन बगैर पावे ॥१३०॥

राग के विकल्प से दुःख नहीं, बल्कि विकल्प स्वयं ही दुःख स्वरूप है। अतः राग का भाव जलकर राख होने पर अर्थात् पूर्ण वीतरागता प्रकट होने पर दुःख की चिंगारी भी नहीं भड़कती है। राख की दीवार गिर जाने पर चैतन्य महल पड़ोसन बिना मुक्त हो जाता है। पूरी तरह राग के जल जाने पर अरिहंत दशा और सदा काल के लिये राख की दीवार गिर जाने पर सिद्ध दशा प्रकट होती है। जागृति रहे कि चैतन्य महल त्रिकाल प्रकट है।

पत्थर दीवार महल नाहीं ।
पावनपद मोक्ष महल होहिं ॥
राख दीवार शरीर नाहीं ।
ज्ञान शरीर है मोक्ष मांहीं ॥१३१॥

पहाड़ी पत्थरों से बना विराट मकान महल नहीं है, मोक्ष महल ही पूर्ण परमात्मा का पावन पद होने से वास्तविक महल है। मोक्ष में राख की दीवार रूपी शरीर नहीं है, इसलिये सिद्ध भगवान अशरीरी हैं, फिर भी भावकर्म, द्रव्यकर्म एवं नोकर्म रहित होने से उन्हें ज्ञान शरीरी कहते हैं। प्रत्येक आत्मा द्रव्य स्वभाव की दृष्टि से ज्ञान शरीरी है।

ध्यान रखते जो पड़ोसी का ।
नित संग पावै पड़ोसी का ॥
राख की दीवार के ध्यानी ।
पाय पड़ोसन नित अज्ञानी ॥१३२॥

जो मालिक पड़ोसी का ध्यान रखते हैं, वे सदैव पड़ोसी का संग पाते हैं। एक पड़ोसी के विदा होने पर नये पड़ोसी तुरंत ही उनके पड़ोस में आ जाते हैं। ऐसे ही अज्ञानी राख की दीवार रूपी पड़ोसन में ही रचा–पचा रहता है, अतः एक राख की दीवार के विदा होते ही नयी राख की दीवार पाता है। मरण होते ही नया जन्म लेता है।

ध्यान रखते ना पड़ोसी का ।
ज्ञानी न संगी पड़ोसी का ॥
है चैतन्य महल के ध्यानी ।
मोक्ष महलवासी विज्ञानी ॥१३३॥

ज्ञानी उनकी पड़ोसन राख की दीवार का ध्यान नहीं करते अर्थात् देह से भेदविज्ञान वर्तता होने से वे राख की दीवार के पड़ोसी तो होते हैं, परन्तु संगी नहीं होते। ज्ञानी का एकत्व चैतन्य तत्त्व में होने से वे ही सत्संगी हैं। वे राख की दीवार का नहीं, बल्कि चैतन्य महल का ध्यान करते हैं, फलतः मोक्ष महल के वैज्ञानिक होकर लोकालोक जानते हैं।

चैतन्य महल प्रशांत पूनम ।
आँगन में राग अमावस तम ॥
होय ना यह पूनम अमावस ।
अमावस नहीं पूनम में वस ॥१३४॥

चैतन्य महल पूर्णिमा के चाँद की भाँति परिपूर्ण शोभायमान एवं त्रिकाल शांत है। चैतन्य महल के आँगन में रागादि विकल्पों का, अज्ञान की अमावस का घना अंधेरा है। चैतन्य चाँद की पूर्णिमा निराली है, क्योंकि वह कदापि अमावस में परिवर्तित नहीं होती और अज्ञान की अमावस कभी चैतन्य की पूर्णिमा में नहीं पलटती। हे ज्ञान दीपक ! अज्ञान की अमावस में नहीं, चैतन्य चाँद की पूर्णिमा की ओर दृष्टि कर।

अधिक ज्ञेय भासे महा महल ।
हीन ज्ञेय झलकतें लघु महल ॥
ज्ञेय प्रवेश ना महल मांही ।
तब हीनाधिक चेतन नाहीं ॥१३५॥

जैसे बड़े महल के विराट दर्पण में अधिक पदार्थ झलकते हैं और छोटे महल के सीमित दर्पण में अल्प पदार्थ झलकते हैं। भले ही दर्पण बड़ा और छोटा हो, फिर भी किसी भी दर्पण में कोई भी पदार्थ प्रविष्ट नहीं हो सकता। फिर छोटे और बड़े दर्पण के भेद से क्या प्रयोजन? ऐसे ही केवलज्ञान में लोकालोक झलकता है और मति–श्रुतज्ञान में मर्यादित ज्ञेय झलकते हैं। भले ही ज्ञान की पर्यायों में भेद हो, फिर भी ज्ञान की किसी भी पर्याय में कोई भी ज्ञेय प्रविष्ट नहीं हो सकता। फिर ज्ञान के भेद की ओर दृष्टि करने से क्या प्रयोजन?

राख दीवार वैतरणी में ।
मैं जाननहारा गंगा में ॥
ज्ञानी महल मांहि ना जाते ।
चैतन्य को दृष्टि में लाते ॥१३६॥

जैसे नरक में वैतरणी नदी में खून बहता है, ऐसे ही राख की दीवार रूपी वैतरणी में खून बहता है। ज्ञानी तो मानते हैं कि राख की दीवार रूपी वैतरणी तो दूर, विकल्पों की वैतरणी से भी न्यारा मैं चैतन्य परमात्मा हूँ, यहाँ ज्ञान की गंगा ही बह रही है। चैतन्य महल में प्रवेश करने का नाम सम्यग्दर्शन नहीं है, बल्कि चैतन्य महल की ओर दृष्टि करना, एकत्व करना सम्यग्दर्शन है।

उदर मांहि अब भोजन नाहीं ।
उल्टी कब्ज दस्त ना पाहीं ॥
राख दीवार बहता लावा ।
महल नहीं चैतन्य अलावा ॥१३७॥

जब पेट में भोजन नहीं होता, तब उल्टी, कब्ज एवं दस्त नहीं होता। कैसी होगी वह सिद्धावस्था जहाँ पेट ही नहीं, बल्कि शरीर ही नहीं होगा। जहाँ मानसिक आधि, शारीरिक व्याधि, संयोगी उपाधियों से छुटकारा होगा। यह लिखते समय राख की दीवार में लावा बह रहा है, फिर भी चैतन्य महल के अतिरिक्त और कुछ सुहाता नहीं है। हे ज्ञान दीपक ! जाना देह कुछ ही काल में अनजाना होने वाला है।

आसमान से बरसे पानी ।
दीवारें गीली हो जानी ॥
असु करुणा अश्रुवर्षा से ।
राख दीवार भीगी ऐसे ॥१३८॥

जैसे आसमान से पानी बरसने पर मकान की दीवारें बाहर से गीली हो जाती हैं, ऐसे ही ज्ञान दीपकों के प्रति उत्पन्न होने वाले अनहद वात्सल्य एवं करुणा के बादल आँसू बनकर आँखों से बरसने के कारण मेरी पड़ोसन यह राख की दीवार भीग रही है। अभी तो ऐसा विचार भी आता है कि गर्मी के दिनों में कड़ी धूप में यह बरसात कैसी ? फिर भी मैं आनंद भवन में विराजमान हूँ। मैं अरूपी चैतन्य महल की अरूपी ज्ञान की खिड़की से बादल, बरसात, राख, राग, आदि सभी को जान रहा हूँ , देख रहा हूँ।

लिखती होय पड़ोसन मेरी ।
पढ़ती होय पड़ोसन तेरी ॥
चैतन्य महल आतम जाना ।
राख पड़ोसन को पर माना ॥१३९॥

हे ज्ञान दीपक ! यह लिखने वाला मैं नहीं हूँ , बल्कि मेरी पड़ोसन है और यह पढ़ने वाला तू नहीं हैं, बल्कि तेरी पड़ोसन है। चैतन्य महल में अपनापन स्थापित होते ही राख की दीवार रूपी पड़ोसन परायी दिखती है। लिखने वाली आठ उंगलियों के पीछे ज्ञान है और पढ़ने वाली दो आँखों के पीछे भी ज्ञान ही है। ज्ञान से ज्ञायक तक पहुँचना ही एक मात्र प्रयोजन है।

दीपक को खुदा कहता था ।
राख पड़ोसी खुद कहता था ॥
चैतन्य महल में रहता हूँ ।
राख कौन आज पूछता हूँ ॥१४०॥

मैं परम ज्ञान दीपक को परमात्मा कहकर पुकारता था और स्वयं को राख की दीवार का पड़ोसी कहता था। अब तो बस चैतन्य की मस्ती में मस्त रहता हूँ और इस राख की दीवार की ओर ध्यान जाने पर पूछता हूँ कि राख की दीवार कौन है ? दर्पण में प्रतिबिंबित इस राख की दीवार को देखकर पूछ लेता हूँ, तुम कौन ? तुम्हें पहिचाना नहीं! पहले मेरी तुम से कभी मुलाकात हुई है क्या ? क्षमा करना, मुझे मोक्ष महल की उड़ान भरनी है, जाता हूँ।

इक राख की दीवार रचकर ।
उमराला में शाम चार पर ॥
वैशाख शुक्ल दूज अधूरी ।
पचीस चार बीस दिन पूरी ॥१४१॥

भरत क्षेत्र की भारत भूमि पर गुजरात राज्य के भावनगर जिले के उमराला गाँव में स्थित आध्यात्मिक साधना केन्द्र के ज्ञान दीपक निवास के चौथे कमरे में वि. सं. २०७६ की वैशाख शुक्ल दूज, शनिवार, दिनांक २५-४-२०२० के दिन शाम के चार बजे, इस ''राख की दीवार का पड़ोसी'' की रचना की मंगलमय मंगलाचरण से भायी गई अपूर्ण भावना अंततः पूर्ण होती है।

ज्ञानी चैतन्य महल वासी ।
जाके चरण युगल है काशी ॥
परम ज्ञान दीपक लघुनंदन ।
अनंत अनंत प्रणाम वंदन ॥१४२॥

प्रत्येक प्रज्वलित ज्ञान दीपक चैतन्य महल वासी है। प्रत्येक ज्ञानी एवं मुनिराज महान हैं, जिनके दोनों चरणों को चलता–फिरता तीर्थ जानो। हे परम ज्ञान दीपक ! आप ही वीतरागी शासन के सच्चे लघुनंदन हो। समस्त परमात्माओं को मेरे हृदय के अंतःकरण से अनंत अनंत प्रणाम करता हूँ, अनंत अनंत वंदन करता हूँ।

ध्यान से ज्ञान दीपक ! प्रज्वलन आत्म साधना

यह जगत सारा क्षणिक है, और आत्मा एक नित्य है। आत्मा का अनुभव, बस एक मात्र नित्य है।।

चैतन्य स्वभावी भगवान आत्मा अनादि–अनंत शुद्ध चैतन्य मात्र है, ज्ञान मात्र है। मैं शुद्ध चैतन्य मात्र, ज्ञान मात्र, भगवान आत्मा हूँ। तीन लोक के किसी भी प्रदेश पर रहकर भी, मैं चैतन्य प्रदेशों पर ही स्थित हूँ। मैं देहरूपी राख की दीवार का पड़ोसी चैतन्य परमात्मा हूँ। मैं अपने चैतन्य महल की ज्ञान की खिड़की से मेरी पड़ोसन राख की दीवार को मात्र जानता–देखता हूँ। राख की दीवार के माता–पिता–भाई–बहन–पुत्र–पुत्री–परिवारजन अत्यंत दूरवर्ती हैं। धन का ढेर धूल की दीवार, महल मिट्टी की दीवार, देह राख की दीवार और रिश्ते कांच की दीवार हैं। इन दीवारों से बना संसाररूपी हवा महल अपनापन करने योग्य नहीं। चैतन्य रस के घनपिंड में परद्रव्य तो दूर, परभाव को भी प्रवेश करने के लिये अवकाश नहीं है। प्रशंसक और निंदक की वाणी तो दूर, वाणी के

विकल्प भी मुझमें प्रवेश नहीं कर सकते। ज्ञान जानता है, वह झुकता नहीं है और राग झुकता है, वह जानता नहीं है। रागादि विकल्प रूपी वैतरणी अधोलोक में बहती है, चैतन्य मध्यलोक में ज्ञान की गंगा ही बहती है। चैतन्य सत्ता रागादि विकल्प एवं देह की क्रिया करने नहीं जाती, इसलिये रागादि विकल्प एवं देह की क्रिया का कर्ता नहीं। मैं चैतन्य सत्ता मात्र हूँ।

यदि बचपन से कोई मुझे नहीं कहता कि मैं जैन हूँ या हिन्दू हूँ, तो भी मेरा अस्तित्व होता या नहीं ? यही मेरा असली स्वरूप है। मैं मिथ्याज्ञानी भी नहीं हूँ, सम्यग्ज्ञानी भी नहीं हूँ। शिष्य भी नहीं हूँ, गुरु भी नहीं हूँ। गृहस्थ भी नहीं हूँ, मुनि भी नहीं हूँ। संसारी भी नहीं हूँ, मुक्त भी नहीं हूँ। मैं चैतन्य सत्ता मात्र शुद्धात्मा ही हूँ। पत्नी आँगन तक, समाज श्मशान तक, पुत्र अग्निदाह तक और शुभाशुभकर्म भव–भवांतर तक साथ देंगे, परम पारिणामिकभाव ही मेरे साथ अनादि–अनंत रहता है, मैं स्वयं परम पारिणामिकभाव स्वरूप हूँ। अनादिकाल से जल से दीपक जलाना चाहा, पर जल न सका। इन्द्रिय विषयभोगों से सुख मिल न सका। प्रतिकूलता में परमात्मा की याद आती है, यदि अनुकूलता में भी खालीपन का एहसास हो, तो उस खाली स्थान में परमात्मा का वास हो सकता है। तीन लोक की सम्पदा के संयोग और वियोग में भी मैं चैतन्य सत्ता मात्र परिपूर्ण परमात्मा हूँ। मैं मांस नहीं हूँ, हड्डी नहीं हूँ, खून

नहीं हूँ, चमड़ी नहीं हूँ। मांस, हड्डी, खून, चमड़ी आदि पदार्थों का पिंड देह मैं नहीं हूँ। कर्मोदय से नाचने वाली देहरूपी कठपुतली मैं नहीं हूँ, परन्तु कठपुतली को जानने–देखने वाला शुद्धात्मा हूँ। बीमारी में राख की दीवार से भले ही लावारस बहे, शुद्धात्मा में तो ज्ञानरस ही झरता है। पेट में भोजन न हो तो वमन, दस्त, कब्ज, नहीं होता। कैसी होगी वह दशा, जब सिद्धावस्था में पेट नहीं, बल्कि आधि–व्याधि–उपाधि का निमित्त देह ही नहीं रहेगा ? सिद्धावस्था से भी महान मैं त्रिकाल सिद्ध परमात्मा हूँ। मैं देहप्रमाण नहीं, ज्ञानप्रमाण हूँ। आत्मानुभूति की पर्याय में भी प्रवेश नहीं करने वाला शुद्धात्म द्रव्य, यही मैं हूँ। मैं ध्यान करने वाला नहीं हूँ, ध्यान का ध्येय चैतन्य तत्त्व हूँ। ज्ञेयों से ज्ञान होता नहीं, इन्द्रियों से ज्ञान होता नहीं, ज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से ज्ञान होता नहीं, विकल्प से ज्ञान होता नहीं, ज्ञान की तत्समय की पर्याय की योग्यता से ज्ञान होता है, ज्ञान की अवस्था में ज्ञान ही है, ज्ञेय नहीं। वह ज्ञान की अवस्था भी मैं नहीं हूँ। जाननेरूप प्रवाह में व्याप्त सामान्य, अखण्ड, एक, अभेद भगवान आत्मा, यही मैं हूँ। आनंद से परिपूर्ण चैतन्य के प्रदेश जहाँ हैं, दुःख के प्रदेश वहाँ नहीं हैं। मैं आनंद भवन में विराजमान रहकर परिणमित जगत को मात्र जानता हूँ। मैं त्रिकाल आनंद भवन ही हूँ। मैं त्रिकाल प्रज्वलित ज्ञान दीपक ही हूँ।

ॐ–ॐ–ॐ

रचयिता की सर्वाधिक लोकप्रिय रचनायें

१. १४२ ज्ञान दीपक ! बोधामृत (गुजराती, हिन्दी, अंग्रेज़ी)
२. आत्मसिद्धि शास्त्र संक्षिप्त टीका (१५३ देशों में उपलब्ध)
३. ज्ञायकभाव प्रकाशक – समयसार टीका (अंग्रेज़ी)
४. ज्ञान से ज्ञायक तक (हिन्दी, गुजराती)
५. आत्मसिद्धि अनुशीलन (गुजराती, अंग्रेज़ी)
६. महावीर का वारिस कौन ? (गुजराती)
७. क्षणिक का बोध और नित्य का अनुभव (गुजराती, हिन्दी, अंग्रेज़ी)
८. मंगल सूत्र – चैतन्य स्वभाव (हिन्दी)
९. जैनधर्म रहस्य (हिन्दी)
१०. पुण्यविराम (गुजराती, अंग्रेज़ी)
११. क्रमबद्ध पुरुषार्थ (हिन्दी, गुजराती)
१२. मुझे मत मारो (इंडोनेशियन)
१३. आतंकवाद में अनेकांतवाद (हिन्दी, अंग्रेज़ी, गुजराती)
१४. स्वरूप ही ऐसा है (गुजराती, हिन्दी)
१५. मरण का हरण (हिन्दी)
१६. अंक अंकित अध्यात्म (हिन्दी)
१७. आध्यात्मिक शब्दकोष (हिन्दी)
१८. ध्यान से पूर्व तत्त्वविचार (हिन्दी, गुजराती, अंग्रेज़ी)
१९. श्रद्धा (हिन्दी)
२०. ज्ञान दर्पण सहस्त्री (हिन्दी)

चैतन्य स्वभावी भगवान आत्मा, अनादि अनंत शुद्ध चैतन्य मात्र है, ज्ञान मात्र है, मैं शुद्ध चैतन्य मात्र, ज्ञान मात्र भगवान आत्मा हूँ। प्रतिसमय यह जागृति बनी रहें, इस जागृति का नाम धर्म है। देह की प्रत्येक क्रिया के काल में और विकल्पों के बहते प्रवाह के काल में ज्ञानी को प्रतिसमय यह जागृति रहती है कि मैं चैतन्य तत्त्व इस देह की किसी भी क्रिया में और विकल्पों के बहते प्रवाह में कहीं भी मिला नहीं हूँ, ऐसा शुद्ध चैतन्य तत्त्व मैं हूँ। चैतन्य तत्त्व की निर्विकल्प अनुभूति होते ही ज्ञान दीपक प्रज्वलित होता है, मोक्षमार्ग पर यात्रा प्रारम्भ होती है। यह प्रतीति होती है कि मैं त्रिकाल प्रज्वलित परम ज्ञान दीपक हूँ। चैतन्य ज्योति की सत्ता में देहरूपी मिट्टी तो दूर, रागादि विकारी भावरूपी धुआँ भी नहीं है।

चैतन्य तत्त्व की निर्विकल्प अनुभूति होते ही स्वयं की स्वयं से मुलाकात होती है। ज्ञानी स्वयं को राख की दीवार का पड़ोसी मानता है और मोक्षमार्ग का मुसाफिर जानता है। चैतन्य महल के पड़ोस में राख की अनंत दीवारें बनी और बिखरी, फिर भी अनादि–अनंत चैतन्य महल सदैव सुरक्षित रहा, यही मैं हूँ। चैतन्य महल में स्थित रहकर ज्ञान की खिड़की से अपनी पड़ोसन राख की दीवार को अत्यंत दूर से जानने–देखने के कारण मैं उसका स्वामी नहीं हो जाता। अनंत काल के लिये अनंत गुणाधिपति चैतन्य महल में ही लीन अनंत सिद्ध परमात्मा अनंत परमाणुओं के पिंड से बनी देह रूपी राख की दीवारों से एवं अनंत संसार परिभ्रमण से अनंत काल के लिये मुक्त होकर अनंत आनंद को भोगते हैं, उसे यह जड़ वाणी कैसे व्यक्त कर सकती है, जिस वाणी का अंत है।